लिये माता की आज्ञा सिर पर चढ़ा कर तेजा तैयार हुआ।

अध्याय ३

शत्रुओं की चुनौती।

माता की आज्ञा को माथे चढ़ा कर तेजा को एक बार, थोड़े समय के लिये ससुराल जाने का संकल्प त्यागना पड़ा। वह जब बहन को लिवा लाने के लिये घर से विदा हुआ तब ख़र्च के लिये उसके साथ डेढ़ सौ रुपये बाँधे गये, एक घोड़ी उसकी सवारी के लिये दी गई और शायद बहन के लिये बढ़िया बैलों का एक तांगा। मालूम होता है कि तेजा आज कल के दरिद्र किसानों की तरह भूखा बंगाली नहीं था। अच्छी तरह खाता पीता था। यदि आजकल की तरह धरती पर अनाप शनाप लगान होती, मंहगी पर मंहगी और अकाल पर अकाल पड़ते रहते, टैक्स पर टैक्स लग जाते और घर गृहस्थी का ख़र्च बहुत बढ़ा चढ़ा होता तो बिचारे तेजा को घर की घोड़ी रखने का समय कहां से मिलता! ख़ैर चारे और दाने की जब बहुतायत थी तब किसान के घरू बैलों की जोड़ी अच्छी हो

तो इसमें आश्चर्य क्या ? परंतु तेजा को समधी के यहाँ लिवा ले जाने के लिये यह जोड़ी पसंद नहीं आई उसने पूरे डेढ़ सौ रुपये खर्च करके एक बढ़िया जोड़ी ख़रीदी। इससे पाठक शायद यह समझ लें कि उस समय भी बैलों की जोड़ी का यही भाव था जो अब है और आज कल गायों और बैलों के मारे जाने का नाम लेकर चौपाये मंहगे हो जाने की जो दुहाई दे रहे हैं वे भूलते हैं, सो नहीं। जैसा माल वैसा मोल। घोड़ा पचीस को भी मिल सकता है और पांच हज़ार में भी सस्ता। साधारण कामों के लिये उस समय चालीस पचास रुपये में जोड़ियाँ मिलती थीं। अस्तु तेजा ने जोड़ी ख़रीद कर राज्य की कोतवाली अथवा सायर में महसूल चुकवाया। कोतवाली अथवा सायर लिखने से प्रयोजन वही है जिसे गानेवाले चबूतरा कहते हैं और देशी रजवाड़ों में दोनों ही चबूतरा कहलाते हैं। सिद्ध होता है कि आज कल की तरह हिन्दू राज्य में रह कर भी बैल की बिक्री पर महसूल लेने का उस समय रवाज था।

तेजा की बहन का नाम राजा था। वह किस गाँव में ब्याही गई थी सो मालूम नहीं किन्तु तेजा

वहाँ दो रात बीच में रह कर पहुँचा। इससे अनुमान होता है कि पचीस तीस कोस से कम न होगा। तेजा के समधी का नाम जोरा था। गाँव के किसी पनघट की बावली पर तेजा शरीर कृत्य से निवृत्त होकर बहन से मिलने के इरादे से ठहर गया। गाँव की पनिहारिनें जब वहाँ पानी भरने के लिये आईं तब उन्होंने बातचीत से उसे पहचाना और तब राजा को जा कर खबर दी कि—"तुझे लिवा ले जाने के लिये तेरा भाई आया है।" इन स्त्रियों में राजा की ननद भी थी। उसका नाम मालूम नहीं। ननद का पैगाम सुन कर राजा ने यह बात मिथ्या समझी। वह बोली :—

"मुझे पीहर से आये बारह वर्ष हो गये। अभी तक जब किसी ने मेरी सुध नहीं ली तो अब कौन आने लगा! घर से निपूता ढोर खो जाने पर भी उसकी तलाश की जाती है। इसलिये नाहक मेरी दिल्लगी करके मुझे क्यों कुढ़ाती हो। उनके लेखे तो मैं मर गई।"

"नहीं नहीं भाभी कुढ़ो मत! उदास मत हो! मैं तुमसे दिल्लगी नहीं करती, सच कहती हूं। तुम्हें विश्वास न हो तो (अपनी चूड़ियां दिखाकर)

सौगंद खाकर कहती हूँ कि तुम्हारा भाई आया है और पनघट की बावली पर ठहरा हुआ है।"

इससे पाठक समझ सकते हैं कि जब हिन्दु रमणियां पति के लिये स्वप्न में भी कभी अशुभ चिन्तन न करने का दावा करती हैं, जब चूड़ी की सौगंद उनके लिये सिर कट जाने से भी बढ़कर है और जब उन्हें मर जाना मंज़ूर परन्तु चूड़ी की क़सम खाना मंज़ूर नहीं तब राजा की ननद ने एक हलकी सी बात के लिये इतनी भारी क़सम क्यों खाई ? उनकी ऐसी समझ में भूल नहीं किन्तु इस बात से यदि वे यह परिणाम निकाल ले कि हिन्दू समाज उस समय इतना गिर गया था कि पति की शपथ खाने में उसने किंचित् भी आनाकानी न की तो उनका यह भ्रम है। क़सम खानेवाली जाटनी थी जिनमें धरेते का रिवाज सदियों से चला आता है। हां, इससे यह नतीजा अवश्य निकल सकता है कि जिन जातियों में एक पति के मर जाने पर अथवा उससे खटपट हो जाने पर दूसरा खसम कर लेने की चाल है उनके यहाँ पति की कदर इतनी ही है।

ननद के सौगंद खाने पर जब राजाँ को भरोसा हुआ कि सचमुच उसका भाई आया है तब वह फूले अंग न समा सकी । लोग कहते हैं कि पनघट की बावली से तेजा चल कर जब बहन के यहाँ गया तब नगर के लोग लुगाइयाँ उसे देखने के इकट्ठी हो गई थीं । सब आपस में कहते थे कि—"जिसे देखने की मुद्दत से अभिलाषा थी उसे आज आँखों से देख लिया ।" बोध होता है कि या तो गांव के ज़मींदार का नातेदार समझ कर लोग तेजा को देखने आये हों अथवा तेजा की वीरता का डंका इससे पहले बज चुका हो; किन्तु अब से पहले उस ने कब कहाँ वीरता की सो पता नहीं । प्राचीन समय में द्विजों के यहाँ द्विज जब अतिथि होता था तब मधुपर्कादि से उसका सत्कार करने की जैसे चाल थी वैसे ही अपने किसी आत्मीय स्वजन प्यारे पाहुने के आने पर उसके लिये आरती उतारने का काम सुहागिनी माता, बहन इत्यादि किया करती थीं । बस इसी तरह राजाँ ने तेजा का भी स्वागत किया । भारतवर्ष के भाषा काव्य में जैसे अत्युक्ति का बहुत आदर है वैसे ही इन गँवारों के गीत में भी कमी नहीं है । कहा जाता है कि मोतियों से

थाल भर कर राजाँ ने भाई की आरती उतारी। मोती सच्चे थे अथवा झूठे सो राम जाने। शायद मोती नहीं ज्वार हो। ज्वार के दाने मोती से होते हैं। लोग सेर ज्वार के लिये सिर कटा दिया करते हैं। "ज्वार बिना कोई द्वार न आवे, जग में नाता ज्वारी का।" बस ऐसे भाई को बधा (?) लिया और तब दोनों ओर के कुशल प्रश्नों का समय आया। तेजा ने अपनी माता का सँदेसा बहन और उसकी सास को सुनाया। उसने अपने गांव की ख़बर सुनाते हुए कहा कि—"छोटा भाई अब इतना बड़ा हो गया है कि बछड़े चराने लगा है।" गाँववालों को अब तक भी अपनी उमर के साल याद नहीं रहते हैं। वे ऐसे ही इशारे से उमर बतलाया करते हैं। इसका मतलब यही है कि लड़के की उमर दश बारह वर्ष की है! ख़ैर बहुत वर्षों में भाई के आने पर बहन उसे उलाहना देने से भी न चूकी। उसने कह दिया:—

"ओ हो! हो! इतने वर्षों में आया! मैं तेरी सूरत भी अच्छी तरह न पहचान सकी। मैं तो भैया, पीहर का रास्ता तक भूल गई।"

इसके अनंतर बहनोई से मिलने की बारी आई। दोनों ओर से "जुहार साहब! जुहार!" हुई। साले का आतिथ्य सत्कार हुआ। नई हंडिया में चावल तैयार किए गए। वहाँ पर भी तेजा ने भगवान् के भजन पूजन में संकोच नहीं किया। तेजा का शृंङ्गार इस तरह का था। पैरों में चमकीला जूता, हाथ में भाला, धोबी से धुलाई हुई मिरजई और कंधे पर रंगीन धोती। माथे पर क्या था सो याद नहीं। भोजन करते समय तेजा की समधिन से यों बातें हुईं :—

"समधिन, राजाँ को भेज दे। दस दिन वहाँ भी रह आवेगी। मेरी मा का इसके लिये बहुत जी लगा हुआ है।"

"नहीं इस समय मैं नहीं भेज सकती। बहू को भेज देने से मेरी खेती चौपट हो जायगी, और और परंतु दही कौन बिलोवैगा।"

इसके उत्तर में जब तेजा ने समधिन को एक दो भैंस देने का वादा किया तब वह राजाँ को भेज देने पर राजी हुई। यों सब लोगों से मिल भेंट कर राजाँ की सास के पैरों पड़ने के अनंतर वह बहन को लेकर वहाँ से चल दिया। वास्तव में मार्ग की रक्षा

का उस समय आज का सा प्रबंध नहीं था। शायद तब इतनी आबादी भी नहीं थी। बहन की ससुराल और भाई के घर के बीच का रास्ता बिलकुल जंगल ही जंगल में हो कर था। पीलेखाल के पास उनको मीनों ने घेर लिया। तेजा सिर से पहले नाक कटाने वाला, मरे मारे बिना एक ही घुड़की में कपड़े लत्ते दे देनेवाला नहीं था। मीने भी बिना घायल किये अथवा बिना घायल हुए किसी को लूट लेना कायरता समझते थे। यदि कोई मुसाफ़िर चोरों के डर से चुपचाप कपड़े उतार देने को तैयार हो जाय तो वे कहा कहा करते थे कि—"यों देना हो तो किसी ब्राह्मण को देना। हम खून निकाले बिना ऐसा दान नहीं लेंगे।" बस परिणाम यह हुआ कि दोनों ओर से लड़ाई ठन गई। तेजा बोला :—

"लड़ो बेशक! मै भी रणभूमि को पीठ दिखाने वाला कुपूत कायर नहीं हूं। मारूंगा; और तुम सब को मार कर मरूंगा परंतु लड़ने झगड़ने से पहले (धरती में अपना बरछा रोप कर) इसे उखाड़ लो तब मुझसे संग्राम करने की हिम्मत करना।"

लोग कहते हैं कि तेजा ने अपना भाला पत्थर में गाड़ दिया था। खैर गाड़ा किसी जगह पर हो परंतु जब मीनों से बरछा उखड़ न सका तब वे यह कह कर कि:—

"अच्छा आज हम तुझे ज़िन्दा छोड़ देते हैं परंतु जब तू सुसराल जावेगा तब रास्ते के पहाड़ों में तुझ से ज़रूर बदला लेंगे।" चलने लगे।

"खैर! मैं तब भी तुम्हें पानी का लोटा पिलाने को तैयार हूँ। बेशक! मेरी ससुराल ऐसी ही विकट जगह में है जहाँ लूट खसोट, मार,काट और डकैती का बाज़ार हमेशा गर्म रहता है।"

तेजा से ऐसा जवाब पाकर मन ही मन वैर लेने की प्रतिज्ञा करते हुए वे लोग वहाँ से चले गये और यह भी अपनी बहन को लिये हुए घर आ पहुँचा। घर पहुच कर तेजा ने फिर वही ससुराल जाने की बात छेड़ी। माता ने बहुत समझाया परंतु उसने माना नहीं। बड़े भाई और भैाजाई के नाम का पता नहीं परंतु भाभी ने उसे समझाया। उसने यहाँ तक कह डाला कि:—

"जहाँ तेरी ससुराल है वहाँ "दैाड़ों" का दैार-दौरा है। मैं तुझे एक की जगह दो—एक मेरी सगी बहन

और दूसरी चचेरी बहन—विवाह दूँगी । तू
वहाँ मरने के लिये मत जा। वहाँ जायगा तो
अवश्य मारा जायगा । मैंने स्वप्न में देखा है कि तुझे
नाग डस गया और तेरा देवल बन गया । इसलिये
प्यारे देवर मैं तुझे हरगिज न जाने दूँगी ।"

जब उसकी ससुराल ऐसे भयंकर प्रदेश में थी
तब उसके चचा और भाई ने उसे रोका क्यों नहीं
अथवा उसकी मदद के लिये दस पाँच हथियारबन्द
साथ क्यों न हुए—सो कोई नहीं कहता, परंतु यह
निश्चय है कि यह अकेला ही जाने को तैयार हुआ ।
तेजा की घोड़ी का नाम लीला अथवा लीलाधरी
था और उसका रंग समंद था । घोड़ी बड़ी मन
चली थी । जाने की तैयारी देखते ही वह रणोन्मत्त
की तरह नाचने और उमंग दिखलाने लगी । तेजा
तीर कमान, भाला, सिरोही, तलवार, तोड़ेदार बंदू
और कमर में कटार—इतने हथियार साथ लिये
उसके शिर पर सुरंग पगड़ी, उस पर कलगी टँके हु
हुई थी । सब साज सामान से लस कर वा
घोड़ी के पास गया और उसे चलने के लिये उता
वली देखकर ज्योंही वह घोड़ी पर चढ़ने लगा
त्योंही उसकी मा, भौजाई और बहन ने उसे

उससे नाराज हुआ। नाराज होकर उसने दिखला दिया कि दुर्जनों का उपकार करके मौत मोल लेना है। उसने साबित कर दिया कि जो बुरे हैं वे अपनी बुराई से कभी नहीं चूकते। और इसी लिये बड़े लोगों ने ठीक कहा है कि—"पयः पानं भुजंगानां केवलं विष वर्द्धनम्"।

खैर! वह साँप बोलाः—"ओहो बड़ा गजब हो गया। तैंने मुझे बचाया क्यों? मैं यदि जल जाता तो कष्टों से छूटता। मैं हिन्दू सम्राट् पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन मुहम्मदगोरी के दारुण संग्राम में मारा गया चाँपावत सरदार हूँ। मेरा नाम बलूसिंह (बलदेवसिंह अथवा बलवंतसिंह का संक्षेप) है। अपनी घोड़ी का मूल्य चुकाए विना मर जाने से और मरती बार मन में इस तरह की ग्लानि रह जाने से मुझे सर्पयोनि में आना पडा है। मैं मर जाता तो दुःख से छूटता। अब मैं तुझे डसूँगा। मारे विना हर्गिज़ न छोड़ूँगा।"

एक विषधर भुजंग का, नरजाति के चिरशत्रु का, ऐसा इरादा देखकर, उससे ऐसा बर्ताव पाकर यदि तेजा चाहता तो उसी समय उसका सफाया कर सकता था किन्तु जिसको बनाया उसे बिगाड़ना,

जिसे बचाया उसको मारना और जिसका उपकार तो
किया है उसका घात करना हिन्दू जाति ने कभी सीखा ही
नहीं। हज़ार जमाना बिगड़ जाने पर भी ऐसी ये
नीचता हिन्दू से कभी स्वप्न में भी नहीं हो सकती
हाँ! तेजा के लिये इस समय एक रास्ता और भी थी
था। वह यदि चाहता तो उसकी खुशामद कर ही
सकता था, उसके आगे रोकर—गिड़गिड़ा कर
प्राणों की भिक्षा माँग सकता था। किन्तु "हाहा खाने
न ऊबरै वैरी बस पड़ियाँ।" यह लोकोक्ति उसके
दिमाग में चक्कर काट रही थी। जो हथेली पर जान री
लेकर केवल मरने ही के इरादे से घर से निकल
पड़ा है यदि वह शत्रु की और सो भी एक ऐसे
दुश्मन की जिसको वह अभी मरते मरते बचा
चुका है खुशामद करे, तो सचमुच उसकी बहादुरी
में बट्टा लग जाय। उसकी जननी लजा जाय। काये
इसी लिये तेजा ने उस सर्प को वचन दिया। टँके
बोलाः— वा

ता।

"अच्छा तुझे उपकार के बदले में मेरा अपकार ग
करके कृतघ्न बनना है तो भले ही बन। मैं तैयार हूँ उस
मैं मरने को तैयार हूँ। मुझे किंचित् भी तुझसे भ

रिपोर्ट से वृष्टि खेती और फसल के काम में हज़ार दर्जे ठीक मिलते हैं उन्हें पैरों से रौंद कर चला और यों उसने दिखला दिया कि जिसे कुछ कर दिखाना है उसके लिये ये तिनके के समान रही हैं।

उसे मार्ग में काले और खाली कलश लिये कुंभारी मिली, उसके सामने काले बैलों की जोड़ी जुती हुई गाड़ी मिली, उसके जाते समय बाईं ओर गीदड़ बोला, और इसी तरह खोटे से खोटे अपशकुन उसे होते गये। जब तेजा ऐसे ऐसे भयंकर अपशकुन देखने पर भी न डरा, न लौटा और उसने अपना संकल्प न बदला तब यदि शकुन देखते ही मनमें एक बार दगदगा भी हुआ तो क्या और न हुआ तो क्या !

अस्तु ! जिस समय वह यों घोड़ी दौड़ाता चला जा रहा था उस समय एकाएक उसकी नजर जलते हुए जंगल पर पड़ी। वहाँ का जंगल जल जल कर भयंकर ज्वालाएं उगल रहा था, चारों ओर धुआँ ही धुआँ होकर आकाश धुआँधार हो रहा था। जो पशु और पक्षी भाग कर, उड़कर अपना ण बचा सकते थे वे अवश्य भागे, उन्होंने अपनी णरक्षा का भरसक प्रयत्न किया किन्तु जब

यमराज का छोटा भाई भीषण दावानल प्रलयकाल की अग्नि की तरह अपने हज़ार हज़ार हाथों से पकड़कर जीव जन्तुओं को अपने विश्वनाशक मुख में डाल रहा था तब जान बचाने का उपाय ही क्या यों भाग जाने पर भी, उड़ जाने पर भी जल भुन कर भुरता हो गये। वहाँ की यह दशा देख कर उसका कोमल हृदय एक दम पसीज गया। गृहिणी से प्रथम समागम की उसकी लालसा और प्रतिज्ञा हवा हो गई। उसने गाए चरानेवाले ग्वालों से इसका कारण पूछा। उसने पूछा कि—"ऐसा घोर कर्म करनेवाला कौन है?" शायद उसे, यदि आग लगा देनेवाले का नाम धाम मालूम हो जाता तो वह अवश्य उसे सजा चखाए बिना नहीं मानता परंतु जब बाँसों के संघर्षण से आग लगी थी तब वह दंड भी देता तो किसे देता? जो जंगल जल रहा था वह घास से हरा भरा था। गोचारण के लिये परती छोड़ी हुई भूमि थी। यह सच्चा गोरक्षक गोसेवा के सिवाय अभी तक उमर भर में इसने कुछ काम ही नहीं किया और जब गोरक्षा के लिये ही मरने को जा रहा है तब गोग्रास—गाय का चारा—जलते देख कर उसका हृदय उछल पड़ा।

तेजा ने घोडी से उतर कर उसे एक अधजले ठुंठ से बाँध दिया। वह धोती ऊपर चढ़ाकर, हाथ की बाँहें ऊँची समेट कर आग बुझाने के लिये तैयार भी हुआ परंतु वहाँ बंबई कलकत्ते की तरह आग बुझाने की कल नहीं, पास कोई कुआँ नहीं, बावली नहीं, तालाब नहीं। पुराण-प्रसिद्ध कथा है कि एक बार किसी पक्षी के अंडे समुद्र बहा ले गया। पक्षी को उसपर क्रोध आया। "कमजोर और गुस्सा ज्यादह" इसके अनुसार वह पखेरु समुद्र जैसे महा बलवान् शत्रु की अनंत जलराशि को उलीच उलीच कर फेंक देने को तैयार हुआ। जल भर भर कर फेंकने के लिये उसके पास कोई पंप नहीं, पखाल नहीं और मशक नहीं—तब उसने अपनी जरा सी चोंच से भर भर कर पानी फेंकना प्रारंभ किया। बस तेजा का उद्योग उसी पक्षी के समान था। वह पक्षी चोंच से समुद्र उलीच कर बदला लेना चाहता था और तेजा ने बिना जल, बिना मदद आग बुझाने का साहस किया। आग किस तरह बुझाई गई सो कोई नहीं बतलाता किन्तु "जो आकाश पर तीर मारता है वह से पेड़ की फुनगियों तक अवश्य पहुँचा देता है।" अथवा जो दृढ़प्रतिज्ञ होकर कार्य आरंभ करता

है परमेश्वर उसका अवश्य सहायक होता है। बा
इसी न्याय से उसने आग बुझाई।

यों आग जरूर ठंढी पड गई पर एक घट
देखते ही उसके आश्चर्य का पारावार न रहा। उस
समझ लिया कि वास्तव में मारनेवाले से जिला
वाला बलवान् होता है। जो कुछ करता है परमेश्व
अपनी इच्छा से करता है। प्राणी केवल निमि
मात्र हैं। उसे आश्चर्य इसलिये हुआ कि "मह
भारत" के संग्राम में जैसे घमासान युद्ध
समय लाशों पर लाशें गिरने की जगह, रक्त व
नदियों के बीच, टिटिहरी के अंडे हाथी का घं
गिरजाने से उसकी पोलाई के बीच में बच गये
वैसे ही एक काला नाग बच गया। जलती हुई अ
के बीच जाकर उसने अपने बरछे की नोक के सह
वह सर्प उछाला और तब धरती पर गिरते गि
अपनी ढाल में रोक लिया। यों जलते हुए उस
नरशत्रु नाग के प्राण बचाकर अच्छी रक्षा की
अपने दुपट्टे पर उसे रख दिया। किन्तु फ
इसका उलटा हुआ। तेजा का कृतज्ञ होकर उ
धन्यवाद देने—आजीवन उसका शुभचिन्तक रह क
उसे सहायता देने—के बदले नरशत्रु नाग उलट

यों तेजा काल के गाल में से बच कर वहाँ से चल अवश्य दिया और चला भी एक और प्रतिज्ञा के भार से अपने हृदय को लाद कर अपनी प्राण प्यारी के प्रिय दर्शन के लिये। किन्तु वहाँ से दो मंजिल निकल कर जब तीसरी मंजिल पर पहुँचा तो बनास नदी ने उसका रास्ता रोक लिया। घोड़ी समेत तेजा को नदी पार कर देने के लिये मल्लाह अवश्य तैयार थे किन्तु वह जेरबंद खोल कर ऊपर बाँध लेने के बाद घोड़ी समेत चौमासे की चढ़ी हुई बनास के पार हो गया। पार जाकर उसने दूसरे किनारे पर श्रीबदरीनाथ महादेव के दर्शन किए। गाँव वाले कहते हैं कि यह वही महादेव हैं जो आज कल गोकर्णेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हैं। गोकर्णेश्वर महादेव का मंदिर बनास के किनारे जयपुर राज्य के राजमहल नामक कस्बे में है। यह स्थान छावनी देवली से पाँच कोस पर अब तक विद्यमान है। यहाँ तेजा ने महादेव के दर्शन कर ब्राह्मण भोजन कराया, आप भोजन किया और घोड़ी को खूब चूरमा खिलाया। और तब दो दिन बीच में ठहर कर अपनी ससुराल के गाँव पनेर पहुँचा।

नहीं है किन्तु आज से सर्प जाति पर कोई उपकार नहीं करेगा।"

"कुछ भी हो परंतु जब मेरी नागिन इसी आग में जल कर मर चुकी है तब तैंने उससे मेरा विछोह क्यों किया? मैं तुझे जरूर डसूँगा।"

"हाँ हाँ! डस लेना! डस लेना! मैं कब कहता हूँ कि मुझे प्राण दान दे; परंतु एक ही बात मैं तुझ से कहता हूँ। मेरी शादी हुए बारह और बारह चौबीस वर्ष हो गये हैं। तब से मेरी स्त्री अपने मैके में पड़ी पड़ी कौवे उड़ा रही है। एक बार जीते जी उससे मिल आने दे। तब मैं जरूर तेरे पास आ जाऊँगा। उस समय जो कुछ तेरे जी में आवे सो करना।"

इस पर सूर्य चंद्रमा की गवाही से, धरती माता की शहादत से सर्प ने तेजा की बात स्वीकार की। वास्तव में हिन्दू जाति की सत्यनिष्ठा का यह नमूना है, तेजा की सच्चाई की सीमा है कि शत्रु भी उसके वचन का विश्वास करे, एक कृतघ्न सर्प तक को उसके प्रतिज्ञा-पालन का भरोसा हो। इससे सिद्ध होता है कि उस समय तक हिन्दू जाति के हृदय से विश्वास का विनाश नहीं हुआ था।

पकड़ लिया। उन्होंने फिर भी उसे समझाया परंतु उसने किसी की एक भी न सुनी। बहन के पूछने पर उसने इकरार किया कि—"पीपल के जितने पत्ते हैं उतने ही दिनों में वापस आऊँगा।" बस इससे सबने समझ लिया कि 'तेजा वापस आने के लिये नहीं जाता, मरने को जाता है।" यह समझ कर सब की सब रो पीट कर रह गई और सचमुच ही तेजा मरने के लिये-मर कर अपना नाम अमर कर जाने के लिये घोड़ी पर सवार होकर वहाँ से चल दिया।

अध्याय ४

प्रतिज्ञा की परिसीमा।

जब तेजा अपने घर से सचमुच मरने मारने अथवा मर मिटने के लिये चला था, जब उसने माता और बहन तथा भौजाई के हजार समझाने पर भी अपनी गृहिणी से मिलने की दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली थी और जब उसे मीनों की चुनौती के बदले के लिए, समर भूमि में अपने हाथों की परीक्षा देकर अपना नाम अमर कर जाना था तब मार्ग में यदि बुरे से भी बुरे शकुन हुए तो क्या? यद्यपि देहाती लोग शकुनों के बहुत कायल हैं, वे इस काम को

समझते भी अच्छा हैं और अनुभव से अनेक बार सिद्ध हो चुका है कि शकुन झूठे नहीं होते हैं परंतु तेजा ने बुरे शकुनों की किंचित् भी परवाह न की निश्चय है कि तेजा गँवार देहाती होने पर भी कर्त्तव्य दक्ष था। वह जानता था कि आदमी अपने कर्त्तव्य पालन के लिये पैदा हुआ है। वह नितांत निरक्षर होने पर भी जानता था कि चाहे कोई प्रशंसा करे अथवा निन्दा, चाहे धन आवे अथवा चला ही क्य न जाय, चाहे आजही शरीर छूट जाय अथवा सौ व बाद परंतु धीर पुरुष न्याय का मार्ग नहीं छोड़ हैं। वह सचसुच ही:—

"निन्दन्तु नीतिनिपुणाः यदि वा स्तुवन्तु।
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ॥
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा।
न्याय्यात्पथः प्रविचलंति पदं न धीराः ॥"

इस लोकोक्ति का ज्वलन्त उदाहरण था। व इसलिये उसने अपनी जन्मदातृ माता की आज्ञा के तुच्छ समझा; देहातियों के लिये जिन शकुनों प ही उनकी दुनियादारी का आधार है, जो ज्योति के मेघ गर्भों से, गवर्नमेंट की मेटिरिओलाजिके

जाट की बेटी व्याही थी। जिस समय वह केवल छः महीने का था तभी उसका विवाह कर दिया गया था। इतनी जल्दी विवाह क्यों किया गया सो मालूम नहीं किन्तु गाँववालों की कविता में कहा जाता है किः—

"थाली में परणायो रे कँवर तेजा
ऊँडो ऊँडो भादूडो सो गाजै रे।"

बस यह कविता इस बात की गवाही दे रही है। गाँववाले अपने गीत में तेजा के केवल इस जन्म का ही हाल सुनाते हों सो नहीं उन्हें किसी तरह मालूम हो गया होगा कि यह पूर्व जन्म में कौन था और किस तप के प्रभाव से इस जन्म में अथवा मृत्यु के बाद इतना पूजनीय समझा जाने लगा। वे कहते हैं कि पूर्व जन्म में भी तेजा गायों का ग्वाल था। गाँव की गायें चराना ही शायद उसका पेशा था। अपनी गायें चराने के लिये वह नित्य जंगल में जाया करता था। एक दिन अकस्मात् उसे किसी महात्मा के दर्शन हो गए। तेजा ने उनकी बहुत सेवा की। फल यह हुआ कि एक दिन महात्मा ने प्रसन्न होकर उससे कहाः—"बेटा माँग! जो माँगेगा वैसा ही पावेगा।" उसने हाथ जोड़ कर उनके पैरों

में पड़ कर प्रार्थना की "महाराज, जो आप मुझसे सचमुच प्रसन्न हुए हैं तो मुझे ऐसा वरदान दीजिये जिससे मेरा नाम होवे और लोग मुझे पूजने लगें।" इस पर महात्मा बोले—"बेटा तू जंगली गँवार है। न तो तू भक्ति जानता है और न ज्ञान; फिर किस बल से मैं बताऊँ कि तू महात्मा बन जायगा। अच्छा भगवती यमुना महारानी के तट पर जा कर तपस्या कर, तेरा कल्याण होगा।" वह बोला—"महाराज जब आपका वरदान है तब कल्याण अवश्य होगा परन्तु मैं गायें चराने के सिवा और जंगल के बबूल खेजड़ों के सिवा यह भी तो नहीं जानता हूँ कि तपस्या किस चिड़िया का नाम है।" इस पर साधु ने योग की साधना का कुछ प्रकार बतला कर उसे यमुना तट के किसी वृक्ष विशेष पर उलटे लटकने का उपदेश दिया। हठयोग का साधन करते हुए वर्षों तक वह कदंब के वृक्ष तले उलटा लटका रहा। बस यों लटके लटके ही उसके प्राणपखेरू उड़ गये। उसकी इस तरह मृत्यु हो जाने के बाद यमुना जल में उसके शरीर से रक्त की बूँदें गिर कर पुष्प बन कर बहने लगीं। उस पुष्प को लछमा (लक्ष्मी) जाटनी उठा लाई और उसी के प्रभाव से

उसके तेजा का जन्म हुआ। इसके तारा और फूलचा- ये दो नाम और भी थे किन्तु वह प्रसिद्ध हुआ तेजा के नाम से।

अब तेजा के पूर्व जन्म की कथा को कोई माने या न माने उन्हें अधिकार है किन्तु इतना अवश्य मानना पड़ेगा कि पूर्व जन्म के किसी ऐसे ही उत्कृष्ट तप के प्रभाव से खेतिहर तेजा तेजस्वी तेजा बन गया। यदि उसके हाथ से कोई ऐसा कार्य न बना होता तो तेजा में इस जन्म में कभी ऐसा गुण आना संभव न था, कभी उसे ऐसे असाधारण पराक्रम करने का, प्रतिज्ञापालन का और सत्यनिष्ठा का सौभाग्य ही प्राप्त होना असंभव था और इस तरह उसकी पूजा होनी भी महा कठिन! अस्तु जो कुछ हो तेजस्वी तेजा के पूर्व जन्म की यही कहानी है।

यह पहले लिखा जा चुका है कि तेजा का विवाह केवल छः महीने की उमर में हो चुका था; किन्तु कहा जाता है कि जब तक उसका वय पचीस वर्ष का न हो गया उसे यह ख़बर भी न होने पाई कि उसकी शादी हुई है या नहीं। भला जब वह निरा गोद का बालक था तब यदि

उसे ख़बर नहीं थी तो नहीं सही किन्तु पीछे से घर-वालों ने उसे क्यों नहीं जतलाया कि तेरा विवाह हो गया है। जब गोद के बच्चों के आगे बहू का नाम आते ही वे हँस पड़ते हैं, जब कुछ कुछ बड़े होने ही पर घर में बालक के विवाह की चर्चा होने लगती है और जब लड़का खेल खेलने में भी प्यारी दुलहिन का नाम लेकर मन ही मन राज़ी हुआ करता है तब यदि बेटे की शादी हो गई थी तो इस विवाह की बात उससे छिपाई क्यों गई ? और जब उसे अपने विवाह होने की ख़बर तक नहीं थी तो उसने ही अपने संगी साथियों द्वारा इस बात का प्रस्ताव क्यों नहीं कर दिया कि—"मैं जब पचीस वर्ष का हट्टा कट्टा जवान हूँ तो मेरी शादी क्यों नहीं की जाती है" बेशक यह एक भेद है और इसका मतलब प्रकाशित होना न होना आगामी पृष्ठों का विषय है।

अस्तु ! इस उमर में जब तेजा अपने ग्वाल भाइयों के साथ जंगल में गायें चराने जाया करता था तब वहाँ अपनी गायों को अपने भाइयों के भरोसे छोड़ कर भगवान् की आराधना किया करता था। किसी जलाशय के तीर पर जहाँ वह बैठा हुआ भजन

कर रहा था कि वहाँ पानी भरने के लिये एक गूजरी आ निकली। तेजा शायद अपने ध्यान में इतना मस्त था कि उसे इस पनिहारी के आने तक की ख़बर न हुई। गूजरी थोड़ी देर तक खड़ी खड़ी योंही उसकी ओर देखती रही परन्तु जब तेजा की आँखें नहीं खुलीं तब लाचार हो कर बोली :—

"भाई, ज़रा पानी तो भर लेने दो। मेरे घर का किवाड़ खुला हुआ है और बालक रो रहा है।"

"दूसरे घाट से (आँखें खोल कर) भर ले। हम इस समय ठाकुर-सेवा कर रहे हैं।"

"और दूसरे घाट पर मेरा पैर फिसल जाय तब? मेरी गागर टूट जाय, मेरी चूड़ी फूट जाय और न मालूम मेरे कहाँ कहाँ चोट लग जाय। तू कब का ऐसा पंडित बन गया है जो घाट पर किसी को पानी तक नहीं भरने देता। तेरी लुगाई अपने बाप के यहाँ पड़ी पड़ी तेरी जान को रो रही है और योंही अपनी जवानी खो रही है और तू यहाँ पंडित बना बैठा है।"

"हैं मेरी औरत! क्या मेरी विवाहिता? जब मेरी शादी ही नहीं हुई तब औरत आई कहाँ से?

तू झूठ बोलती है। अच्छा जो सच्ची है तो खा कसम ! खा अपने चूड़े की सौगंद या अपने छोटे भैया की ?"

"मुझे गरज़ ही क्या पड़ी है जो मैं झूठ बोलूँ। क्या मुझे झूठ बोलकर तुझसे जागीर लेनी है ? जिस गाँव में तेरी ससुराल है उसी में मेरा पीहर (मैका) है इसलिये मैं जानती हूँ और इसी लिये मैं सौगंद खाती हूँ।"

यों माना गूजरी के सौगंद खाने पर उसने जाना और साथ ही माना कि "मेरी शादी हो चुकी है।" बस पति और पत्नी के बीच में जो एक अलौकिक प्रेम होता है वह पत्नी का नाम सुनते ही उसके हृदय में लहरें मारने लगा। आजकल पचीस वर्ष के लड़के चार पाँच लड़कों के बाप बन जाया करते हैं किन्तु तब तक तेजा को स्त्री का शायद संस्कार तक नहीं हुआ था। कामशास्त्र के विद्वानों की तरह नहीं, ग्रामीणों के ग्राम्य धर्म का भी उसे थोड़ा बहुत ज्ञान होता तो अवश्य वह किसी न किसी तरह अपनी गृहिणी का पता पा सकता था। किन्तु आज ही अभी उसे खबर हुई और तुरंत ही वह पूजा पाठ समेट कर अपनी माता के पास पहुँचा।

केवल पहुँचा ही क्यों उसने उदास होकर अपनी जन्मदातृ माता से पूछा :—

"मां ! क्या मैं अभी तक कुँवारा ही हूं ? मेरे संगी साथी इस सावनी तीज पर अपनी अपनी बहुओं को लाने के लिये अपनी अपनी ससुराल में जाने की तैयारी कर रहे हैं।"

"हैं ! किस निपूते ने तुझे बहका दिया ? किस मुई ने ऐसा बोल मार दिया ! हाय ! तीर की मार अच्छी और "बोल" की मार खोटी। जिसने तुझे बहकाया है उस पर—राम जी करें-बिजली गिरे।"

"नहीं मां ! नहीं ! जिन्होंने मुझसे कहा है उन्हें ऐसी गाली न दे। भगवान् करे उनका मंगल हो। वे फलें फूलें और सुख पावें। उन बिचारों ने तेरा बिगाड़ा ही क्या है जो तू उन्हें कोसती है। जिनके हाथ से हमारा कुछ नुकसान हो जाय उन्हें भी गाली देना अच्छा नहीं। बस तू मुझे जवाब दे कि मैं अभी तक ब्याहा हूँ या कुंवारा।"

"बेटा ! बेशक तेरी शादी हो चुकी है। तू केवल छः महीने का था तब ही तेरा विवाह कर दिया गया था।"

"अच्छा तो तब मैं ससुराल जाऊँगा।"

"हां! जावेगा तो सही परंतु घर की लीला घोड़ी दुबली है।"

"नहीं मैं ज़रूर जाऊँगा। बस दिन निकलते ही रवाना।"

"हां हां! जायगा तो सही परंतु पहले अपनी बहन को तो ससुराल से ला। उसे गये बहुत अर्सा हो गया। औरों की लड़कियाँ दो दो फेरे पीहर हो गईं और तेरी बहन तब से ससुराल में पड़ी हुई है।"

मालूम होता है कि तेजा के और भाई भी थे उनके नाम का कुछ पता नहीं परंतु भाई थे तेजा ने कहा :—

"बहन को लिवा लाने के लिये छोटे भैया को भेज दे। और वह अभी बालक है तो चाचा को भेज दे।" मालूम होता है कि तेजा का बाप काम काज कुछ नहीं करता था क्योंकि माता ने जो पुत्र को उत्तर दिया उससे स्पष्ट है कि घर में कर्त्ता धर्त्ता इसका चाचा ही था। बस इस बहाने से चाचा भी जब न भेजा गया तब बहन को लाने को

अब पाठकों ने अवश्य समझ लिया होगा कि मुंशी
वीप्रसाद जी की बतलाई हुई पनेर और इस पनेर
कोसों का अंतर होना चाहिए। मुंशी देवीप्रसाद
ी की तलाश के अनुसार तेजा की जन्मभूमि चाहे
ारवाड़ के खड़नाल गाँव में हो अथवा गानेवालों
के विचार के अनुसार रूपनगर राज्य किशनगढ़ में
ा किन्तु उसके गाँव और ससुराल का फासला
म से कम पांच सात मंजिल होगा और इन दोनों
बीच नदी बनास भी होनी चाहिये। यद्यपि पनेर
ाँव बूँदी अथवा जयपुर के इलाके में कहाँ पर है
थवा उस जमाने में था सो अभी तक मालूम नहीं
न्तु जो आदमी रूपनगर से चलकर राजमहल के
िकट बनास नदी के पार उतरे और राजमहल से
सकी ससुराल दो तीन मंजिल पर हो तो उसकी
सुराल अवश्य बूँदी के इलाके में डुगारी के आस
ास होनी चाहिये। डुगारी में अब भी तेजा दशमी
र बहुत बड़ा मेला होता है। दूर दूर के यात्री
पनी अपनी डसियाँ कटवाने के लिये वहाँ जाते
। जब अटकल से ही काम लेना है तब यह भी
हा जा सकता है कि इसकी ससुराल केकड़ी
ी थी क्योंकि वहाँ भी भारी मेला होता है।

परन्तु इस अटकल से सच्चाई नहीं मालूम होती क्योंकि रूपनगर से केकड़ी जानेवाले को शायद प्रथम तो बनास उतरने की आवश्यकता ही नहीं और सो भी राजमहल के पास।

अध्याय ५

ससुराल में तिरस्कार।

गत अध्याय के अन्त में तेजा पनेर पहुँच तो गया परन्तु जिसने पच्चीस वर्ष की उमर में कभी ससुराल नहीं देखी, सास ससूर नहीं देखे, अपनी सात फेरों की औरत नहीं देखी अथवा यों कहो कि जिसको किसी ने न देखा वह योंही—विना किसी तरह के इशारे के—ससुराल में जाकर कहे कि "मैं तुम्हारा दामाद हूँ" और यदि वहाँ पर पहचाना न जाय—और ऐसा संभव भी है क्योंकि जब उसका व्याह हुआ था तब उस की उमर छः महीने की थी—तो ज़रूर ही वहाँ से जूते मार कर निकाल दिया जाय। क्योंकि हिन्दुओं में दूसरे किसी का दामाद बन जाना गाली है। और यह उस ज़माने की बातें हैं जब राजपूत जाति किसी को अपना दामाद बनाने में अपनी

ठी—अपने लिए लज्जा समझ कर कोमल कन्याओं ा जन्म लेते ही कलेजा मसोस डालती थी। "न हेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी" की लोकोक्ति के नुसार जन्मते ही बालिका के रक्त से अपने ाथ रँगने की नीचता दिखाने में नहीं हिचकती ी। सब नहीं, अनेक परन्तु अनेकों की नीचता । कलंक सब पर था और उस काले टीके को टाने का यश ब्रिटिश गवर्नमेंट को है।

अस्तु! तेजा ने गाँव के बाहर जाकर किसी ीचे में विश्राम लिया। यह बाग़ उसके ससुराल- ों का था। किन्तु तेजा नहीं जानता था कि नका है। जब वह जाकर वहाँ पहुँचा तब बग़ीचे का ा बन्द था। इसके कहने से मालिन ने ताला नहीं ा। गीतों में कहा जाता है कि उसके प्रताप से ा अपने आप खुल पड़ा और शायद ससुराल ाकर अपनी मस्ती दिखाने के लिए ही उसने चे में घोड़ी योंही छोड़ दी। घोड़ी ने बग़ीचे के तहस नहस कर डाले तब मालिन को ग़ुस्सा । और उसने ख़ूब कोड़े मार मार कर घोड़ी ाल उड़ा डाली। घोड़ी की ऐसी दुर्दशा देखकर का भी क्रोध भड़क उठा। उसने मालिन को

ठोंका। मालिन रोती पीटती अपनी मालिकिन के पास गई और इस तरह तेजा के वहाँ आने का पैगाम उसकी ससुराल में पहुँचा यह बगीचा उसकी स्त्री की निगरानी में था। उसका नाम बोडल था। उमर उसकी वही बारह और बारह चौबीस वर्ष की होगी। इस तरह बाग को नष्ट भ्रष्ट कर डालना और तिस पर मालिन को मारना—ये दो अपराध तेजा के थे। मालिकिन को सुनकर पहले बहुत ही क्रोध आया। एक चौबीस वर्ष की अबला बालिका में बल ही क्या जो प्रचंड तेजस्वी तेजा का मान मर्द्दन कर सके। यदि दोनो के भाग्य में दाम्पत्य सुख बदा होता तो शायद किसी दिन मानिनी बनकर तेजा का मान भी मर्द्दन कर सकती थी किन्तु इस समय युवती बोडल ने लूट मार के केन्द्र पनेर के निवासी लुटेरों के सरदार बदन जाट के बल पर यहाँ तक कह डाला कि—"मैं और तो और परन्तु पानी तक में आग लगा सकती हूँ आकाश के तारे उतार सकती हूँ। तू घबरा नहीं। जिसने मेरा बाग बिगाड़ कर तुझे मारा है उसे अवश्य दंड दिया जायगा।" घर में बेटी लाडली थी और ससुरालवालों के न सँभालने से बेटी का

ाड और भी बढ़ गया था। बस इसने अपनी
ाभी को हुक्म दिया कि—"पानी भर लाने के
ास से जाकर देखो तो वह कौन आदमी है?"
नद के कहने से भौजाई गगरी माथे पर रखकर
गीचे की बावली में पानी भरने को गई। यह
ावली बदना की बनवाई हुई थी।

जिस समय भौजाई ने वहाँ पहुँच कर माथे की
ारी सीढ़ियों पर धरी तेजा जपस्थली में हाथ
ले हुए "राम राम" जप रहा था। तेजा के लिए
तरह भजन करने का यदि यह पहला ही अव-
हो तो पाठक कह सकते हैं कि उसने ससुराल-
ों को दिखलाने के लिए ढोंग फैलाया था।
ु नहीं—यह उसका नित्य नियम था और सच-
ही वह बड़ा आस्तिक था। वह खाते पीते उठते
सोते जागते, चलते फिरते कोई काम भगवान्
नाम लिए बिना नहीं करता था। इस गायन में
पद पर इसका संकेत है। और फिर वह ज़माना
ऐसा नहीं था जिसमें भगवान का भजन भी
ढकोसला ख़याल किया जाय।

बादल की भौजाई और तेजा के साले की बहू
घट की ओट से उसे सिर से पैर तक अच्छी

तरह निरखकर कुछ कुछ पहचाना, कुछ अटकल लगा और तब कुछ मुसकुरा कर, होठों से अपनी मंद मं- हँसी को दबाते हुए परदेशी अनजान से बात करने अथवा यदि कुछ पहचान भी लिया तो अपने ननदो से बात चीत करने में लजाते हुए पूछा और पूछने में ही थोड़ा सा विनोद झलका कर अपना परिचय दे डाला। वह बोलीः—

"ए परदेशी पखेरू! किस नगरी का निवासी है और किसके यहाँ का प्यारा पाहुना है?"

"मैं रूपनगर का रहनेवाला हूँ: और इस नगरी में बदना का प्यारा पाहुना। बदना मेरा ससुर और मैं उसका दामाद!" तेजा से ऐसा उत्तर पाकर उसकी कली कली खिल उठी। वह वैसे ही मृदु हास्य से कहने लगी—"कुँवर साहब! आप पधारे हैं! भले पधारे! आज किधर भूल पड़े। मेरी ननद तो आपकी राह देखती देखती थक गई।" उसने इस तरह तेजा को अपना परिचय देकर उसका परिचय ले लिया किन्तु हिन्दुओं योंही स्त्री जाति को स्वतंत्रता नहीं फिर घर वा बहू बेटी और जवान क्योंकर एक जवान मेहमान से कह सके कि "तुम घर चलो!" बस यों वह भी

जाते जाते ननदोई को उसी घूँघट की ओट से निरखती हुई, सिंहावलोकन की तरह फिर फिर कर उसकी ओर निहारती हुई चल दी और घर पहुँचकर ब ननद से बोलीः—

"लाओ हमारी मिठाई ! बोलो आज क्या इनाम दिलवाओगी ? मैं अभी ऐसी ख़बर सुनाना चाहती जिससे तुम्हारी कली कली खिल उठे ।"

"हैं हैं ! क्या ख़बर ? कहो तो सही कौन सी ख़बर ? ऐसी कौन ख़बर है जिसके लिए तुम मिठाई मांगती हो । मिठाई दो तो तुम दो । भगवान ने तुम्हें सुख दिया है । तुमने इस बार गनगौर पर ही मिठाई नहीं दी ! मुझ अभागी से मिठाई क्या और इनाम क्या ? जिसे जिन्दगी भर तुम्हारे टुकड़ों पर गुज़ारा करना है उससे मिठाई ? भाभी योंही काँटों पर न घसीटो !"

"नहीं ! सच कहती हूँ । हँसी नहीं करती । आज ज़रूर मिठाई लूँगी (हँस कर) प्यारे पाहुने आये—तुम्हारे ही प्यारे का पैगाम लेकर आई हूँ । जिसके लिए तुम बरसों से आस लगाये बैठी थीं वह आ पहुँचा और तुम्हें ही लेने के लिए आये हैं । ...... "इतना कहते कहते ननद ने भौजाई का

मुँह पकड़ लिया। इसके बाद क्या बात चीत हु
सो कहने का अधिकार इस लेखक को नहीं। कह
की आवश्यकता भी नहीं। मेरी कल्पना ने जहाँ
तक इसे पहुँचा दिया उतना ही बस है।

खैर पनिहारियों के कहने से तेजा को मालूम
हुआ कि बदना जाट की हवेली के दरवाज़े प
पारस पीपल का पेड़ है, उसका बेटा कानों में मोर्द
पहने हुए है, और वह खूब धनवान है परन्तु उस
वहाँ जाने पर शायद इसका बिलकुल उलटा पाया
जिस समय तेजा ने अपनी सास के पास जाक
जुहार किया तो वह पीढ़े पर बैठी चरखा कात रही थी
और जब ससुर से मिला तब वह भैंस चरा रहा थ,
उसके घर की औरतें आँगन बुहार रही थीं औ
लड़का चौसर खेल रहा था। दामाद की खाति
करने के लिए पलँग बिछाया गया और कस्तू के
डाला हुआ तम्बाकू उसे पीने को दिया गया। तेजा के
ससुरालवालों का ऐसा आतिथ्य स्वीकार तो किया
परन्तु वहाँ जाते ही फिर भगवान की सेवा कर पु
के लिए जल की गगरी माँगी। इधर उसका इस
प्रकार से नित्य नियम आरंभ हुआ और उधर खान
बनने लगा। घर से घी देकर बदले में तेल, गेहूँ

का आटा देकर उसकी जगह कुलत्थ, और दामाद को परोसने के लिए वाकले तैयार किये गये। इस पर बेटी बहुत कुढ़ी, बहुत रोई और मुँहफट बनकर उसने माता से यहाँ तक कह दिया कि:—

"घर में सब कुछ मौजूद होने पर भी मेहमान का इतना तिरस्कार क्यों करती है? क्या तुझे आना अच्छा नहीं लगा?"

"हाँ हाँ! जमाई और जम, दोनों की एक ही राशि है।"

अस्तु वह योंही रो झींक कर रह गई और तेजा लिए परसा वही गया जो तैयार किया गया था। जा ने उस थाल में से दो तीन ग्रास अवश्य लिए न्तु ससुराल में जाने पर ऐसा अपमान! जहाँ वता के समान पूजा होने की आशा वहाँ ऐसा नादर! विवाह के बाद चौबीस वर्ष में पहली बार आने पर ऐसी बेइज्ज़ती! तेजा इस अपमान को हन न कर सका। वह तुरन्त ही उठ खड़ा हुआ। हे होकर उसने थाली को एक लात मारी और तब से यह गया वह गया, चल दिया। जाती बार उसने सास से जुहार की या न की सो मालूम

नहीं किन्तु उसने सास की गाली अवश्य खाई
उसे जाता देखकर वह बोलीः—

"अच्छा जाता है तो जा निपूते! तुझ पर गा
पड़े। जा! तुझे काला खा जावे! जा!"

तेजा गाली खा कर नहीं गया। गाली के बद
ऐसी ही उलटी गाली देकर वहाँ से वह चल दिय
और तब उसने उसी बगीचे में अपना डेरा डा
दिया। वहां ठहर कर तेजा ने बस्ती भर के ब्राह्मणों
भोजन कराया। केवल ब्राह्मण भोजन ही क्यो
बस्ती के सब आदमी, लुगाई बालक बूढ़ों को न्यो
दे दिया; एक न दिया अपनी ससुराल वालों को
ब्राह्मण रसोई बनानेवालों के हाथ से चूरमा बन
कर सब को जिमाया। जब सब लोग राजी खु
भोजन कर चुके तब तेजा की पारी आई। भ
वान के ध्यान पूजन से निवृत्त हो कर यह भी भोज
करने बैठा सही परन्तु ससुराल की तरह वहां
परसी थाली उसके सामने से खींच ली गई। आ
अच्छा बुरा चाहे जैसा हो किन्तु तेजा ने वहां उस
लात मारी थी। हिन्दू अन्न को देवता मानते हैं त
भी उसने उसका अपमान किया था। यहां तेजा
भोजन आरंभ करके दो तीन ग्रास लेते लेते ही सा

री ने इसके आगे हाय तोबा मचाई। शायद वही माना गूजरी थी जो एक बार जंगल में शाय के किनारे उससे मिलकर उसके विवाह की याद दिला चुकी थी। माना ने कहाः—

"हाय हाय! अब मैं क्या करूँगी? घर में इस कोई आदमी नहीं। निपूते इस गांव के कोई पुकार सुनते नहीं और लुटेरे जंगल में से चरती री सब गाएं लिये जा रहे हैं।"

'ले गये तो ढोली (ढोल बजानेवाले) को र गाँव की "वार" चढा। सब के साथ मैं भी को तैयार हूँ।"

ार क्या चढ़ाऊं? गांव के सारे मर गये। ही डरके मारे मरने के डर से आनाकानी है तब हद हो गई। हाय अब मैं क्या करूँगी। री सब गाएँ गईं। गवाड़ा-खिड़क खाली हो अरे! ये वेही चांदा के मीने हैं जिनसे तैने का बदला लेने की सौगंद खाई थी। ऐसा था तो घर से आया ही क्यों था? मेरी तरह हन लेता।"

वे ही मीने? अच्छा तब जरूर जाऊँगा। मारूँगा और मरूँगा परन्तु तेरी गाएँ छुड़ा

कर लाऊँगा। जो न छुड़ा लाऊँ तो मैं तेजा नह
तेजा और तेजा की सात पीढ़ी को धिःकार।"
कहते हुए तेजा ने भूखे पेट थाली हटा दी। ह
धोकर कुल्ली करने के अनंतर तेजा ने कपड़े प
हथियार सजाये और तब घोड़ी कसकर उस
सवार हो गया। सवार क्या हुआ चढ़कर अ
ही गाँववालों की मदद लिये बिना चल दि
घर से जब चलने लगा था तब माता ने उसे रे
था किन्तु "बेटी देकर बेटा लेनेवाले" सास स
ने इससे कुछ न कहा। मालूम होता है कि ससुर
वालों से इसकी दुश्मनी थी।

अध्याय ६

डेढ़ सौ से अकेला।

तेजा अथवा उसकी माता से बदना
उसकी जोरू की यदि शत्रुता न होती तो माता
ससुराल जाने से क्यों रोकती और बदना की ओ
ही ऐसे प्यारे पाहुने का इतना अपमान क्यों करत
तेजा की माता के लिये तो यह भी ख़याल किय'
सकता है कि बेटे का अमंगल विचार कर
भेजने में नाहीं की क्योंकि इधर तेजा मुठमर्द और

ङ्गा प्रदेश भयंकर किन्तु बदना की जोरू के बर्ताव
ह्या कोई कारण ध्यान में नहीं आता । संभव है
आज कल हिन्दू समधियों की आपस में जैसे
ज़रा ज़रा सी बात के लिये खिंचाखिंची हो जाया
करती है और इस समय समधियों अथवा सम-
धिनों के परस्पर अड़ाव से जैसे आजीवन स्त्री पुरुष
में जूती पैजार हुआ करती है वैसे ही कुछ हो पड़ा
।ा !

खैर ! माना गूजरी के उभारने से तेजा सज-
ज के साथ डेढ़ सौ मीनों से लड़ मरने के लिये
केला ही चढ़ दौड़ा । उसकी शरणागतवत्सलता ने,
सके प्रतिज्ञा पालन ने अथवा उसकी भावी ने उसे
ठ तक फेर कर न देखने दिया कि कोई उसकी
दद के लिये आता तो नहीं है । अस्तु, वह घोड़ी
ड़ाता वहाँ से चला और जब तक उसे गायों को
ये हुए मीने जाते दिखाई न दिये उसने कहीं
आम तक न लिया । अंत में उसे दूर से गोरज
ड़ती दिखलाई दी । फिर गाएं देख पड़ीं और साथ
। डेढ़ सौ हथियार बंद मीनों का झुंड । एक ओर
सो और दूसरी ओर अकेला वह । यदि तेजा
च्चे दिल का होता, यदि उसे प्राणों का लोभ होता

और यदि वह माता से की हुई प्रतिज्ञा को तिन
की तरह तोड़ डालना चाहता तो उसी समय वापि
जा सकता था। परन्तु नहीं! रणभूमि से विमु
होकर भाग जाना और मर जाना उसके लिये समा
था। वह ऐसे नाक कटा कर जीने से सिर क
कर मर जाने को सीधे स्वर्ग चला जाना समझ
था। बस इसलिये उसने अपने प्यारे प्राणों
समर यज्ञ में होम देने के दृढ़ संकल्प के साथ
लुटेरों को ललकारा:—

"ठहरो! ठहरो! कहां लिये जाते हो इन गा
को? जो मर्द भी है तो लड़ो! अपने प्रण का पा
करो और जो हिम्मत नहीं हो तो गायों को छो
कर भाग जाओ। देखना तुम डेढ़ सो और मैं अके
हूँ परन्तु इस अकेले के हाथों का मजा चख जा

"जा जा! अपना मुंह लेकर लौट जा। क्यों
औरों के काम के लिये दीये में पतंग क्यों बनता है?
उस रांड़ गूजरी ने यों ही जीजा जीजा और जमा
जमाई कहकर तेरी जान लेने के लिये जोश दि
दिया है। याद रखना! डेढ़ सौ आदमी हैं। यदि
तेरी ओर थूंक दें तो भी तू बह जायगा। तेरी क्या
मजाल जो हमपर हाथ उठा सके।"

"हैं ! मैं लैाट जाऊँ ? चला जाऊँ तो मेरी जननी लाज जाय। तुम यदि डेढ़ सो बकरियाँ हो तो मैं शेर श्रैार डेढ़ सो चिड़ियों में अकेला बाज़ हूँ ! घबराओ नहीं ! अभी एक एक की गिन गिन कर ख़बर लिये लेता हूं। अगर तुम्हें गिन गिन कर मजा न चखाऊँ तो मैंने माता लछमा का दूध पीकर झख मारी।"

हैं ! तू लछमा का बेटा है ? तब तो तू हमारा भानजा हुआ ! वह हमारे राखी बांधती थी।"

"राखी बांधती थी तो अच्छी बात है ! मामाजी गायों का छोड़ जाओ श्रैार मेरी मामियों का लंबी कांचलियाँ पहना कर विधवा मत बनाओ।"

"अरे छोकरे ! फज़ूल बातें बनाता है ! भाग जा अपनी जान लेकर। हम डेढ़ सो बहादुर श्रैार तू अकेला छोकरा।"

"अच्छा लीजिये डेढ़ सो बहादुर मामा साहब ! संभालिये।" कहकर तेजा ने तीर बरसाना आरंभ कर दिया। सचमुच ही उधर डेढ़ सो श्रैार इधर वह अकेला था। एक दम से एक ही बार में उस पर यदि डेढ़ सो तीर पड़ें तो उसका शरीर ही टुकड़े टुकड़े होकर लाश तक का पता लगना मुशकिल हो जाय। परंतु क्या अकेले तेजा पर डेढ़ सो के

डेढ़ सौ ही तीर मार सकते थे। गायों की संख्या विदित नहीं परंतु जब उन्हें घेर कर ले जानेवाले डेढ़ सौ थे तब यदि दो हज़ार गायें मान ली जायँ तो आश्चर्य्य नहीं। बस इतनी गायों को रोकनेवाले भी तो चाहिएँ। यदि न रोकी जायँ तो योंही जंगल में तितर बितर हो जायँ। गाए भी तो ऐसी नहीं थी जो उन्हें पहचान कर बोली पर रुक सके। फिर डेढ़ सौ होने से उन लोगों को घमंड भी था कि अकेला छोकरा हम डेढ़ सौ का क्या कर सकता है? बस तेजा के तीरों की भरमार ने सचमुच ही उनको व्याकुल कर दिया। उसने जैसा कहा था वैसा ही कर दिखाया। उसके एक एक तीर से एक एक आदमी मर मर कर, घायल हो हो कर, जब एक, दो, तीन, चार गिरने लगे तब मीनों के पैर उखड़ गए। पैर उखड़ जाने से पाठक शायद यह समझ बैठें कि क्या मीनों ने तेजा पर वार किये बिना ही उसे गायें सौंप दी होंगी। नहीं! ऐसा कदापि नहीं हो सकता। हो सकता है कि तेजा को अकेला समझ कर उन्होंने इसकी परवाह न करने से धोखा खाया। परंतु वे भी खाली हाथों नहीं भागे। जिस समय गायें छोड़ कर मीने भागे उनके तीरों की मार से तेजा

श्रोर उसकी घोड़ी भी कम घायल नहीं हुई थी। दोनों का शरीर सचमुच छिन्न भिन्न हो गया था। उनका सारा बदन लहूलुहान होकर कपड़े खून से रंग गये थे। दोनों के शरीर में से रक्त टपक टपक कर धरती भिगोता जाता था, गायें आगे आगे घर की ओर मुंह किये हुए अपने अपने बछड़े बछिओं से मिलने के लिये उतावली हो कर चली जा रही थीं और तेजा भी घायल वीरों की तरह मतवाले मातंग की नाईं विजय के जोश में झूमता हुआ पनेर की ओर चला जा रहा था।

उस समय उसे अवश्य ख़याल हुआ होगा कि "माना को उसकी पूरी की पूरी गायें पहुंचाने से उसको धन्यवाद मिलैगा।" किन्तु धन्यवाद के बदले तेजा को उलाहना मिला। कृतघ्न माना ने तेजा की तारीफ़ करने के बदले, उसका उपकार मानने की जगह और मीठे वचनों से उसका स्वागत करने के स्थान में सचमुच ही अपनी नीचता दिखाई। उसने यह साबित कर दिया कि ऐसी ही नीचातिनीच नारियों की बदौलत रमणी-समाज कलंकित हुआ है। वह बोलीः—

"अरे सब ले आया तो क्या हुआ ? हाय मेरा एकला सांड़ ! अरे वही सब की जान था। हमारे गाँव में दस बीस कोस तक ऐसा कोई सांड़ नहीं था। उसी की बदौलत मेरी गायों में अच्छे अच्छे बैल पैदा होते थे और यों मैं हजारों रुपया कमाती थी। हाय अब मैं क्या करूंगी ? ले जा, तेरी गायें मुझे नहीं चाहिएं। इतनी गायें ! भले ही उनको वापस दे दे। बस मेरा सांड़ ला दे और नहीं तो पहन ले लँहगा ! तैने कुछ भी न किया ! जब मेरा सांड़ ही नहीं आया तो औरों का आना किस काम का ?"

"अरे माना गूजरी। मुझे मत मरवा। मैं यों ही मारा जाऊँगा। उधर वे डेढ़ सौ और इधर मैं अकेला। मेरी चिंदिया बिखर जायगी और मुझे भय है कि मैं उस नाग-देवता से अपना वादा पूरा करने न पाऊँगा।"

"अच्छा तो तू डेढ़ सौ देख कर घबरा गया ? गूलरफल के डेढ़ सौ मच्छरों से ? बड़ा बहादुर बनता था ना ? लंहगा पहन ले !"

"हैं ! मैं लहगा पहनूं ? लंहगा पहनें पनेर के मर्द ! मैं मारूंगा और मरूंगा।" कह कर तेजा ने फिर समरभूमि की ओर घोड़ी की बाग़ मोड़ दी।

पहली बार जब तेजा गया था तब उसे प्रतिज्ञा-पालन के लिए जीता लौट कर नाग-देवता के दर्शन पाने की आशा थी। मरना तब भी था और अब भी है परंतु तब वचन का निर्वाह करके मरना था और अब प्रतिज्ञा की धरोहर छाती पर लाद कर मरने चला। तब शत्रु के बाणों की मार से उसका शरीर छिन्न भिन्न हो गया था और अब जीवित लौटने की आशा त्याग कर चला और ठान कर चला कि अब समराग्नि में अपने शरीर को, प्राण को, प्रतिज्ञा को और सर्वस्व को होम कर देना है। बस यही ठान कर वह रणोन्मत्त हो कर चला और मारा-मार घोड़ी को दौड़ा कर तेजा ने फिर उन मीनों को जा पकड़ा। दूर से ही वह ललकार कर बोलाः—

"मामा जी, बैल लेकर कहाँ जाते हो? इसे तो दे जाओ। इतनी जानें खो कर भी यदि लड़ने से पेट न भरा हो तो एक बार फिर देख लो भानजे के हाथ!"

बस, इसके अनंतर खूब ही मारा मारी हुई। इधर मीनों के तीरों की मार से तेजा के घाव पर घाव लगने लगे और उधर तेजा के वार फिर पहले की तरह एक एक वार से एक एक

आदमी को गिरा गिरा कर धराशायी करने लगे। वास्तव में घमासान युद्ध मच गया। मरनेवालों की लाशों से, घायलों के आर्तनाद से और तेजा के रक्तप्रवाह से गहरा झगड़ा मच गया। मांसभोजी रक्तलोलुप पशु पक्षियों की ख़ूब दावतें हुईं। अंत में मीने हार कर भाग गए। एकला सांड अथवा गानेवालों के शब्दों में "काने बछड़े" को लेकर तेजा विजय की हँसी हँसता वापस आ गया।

अध्याय ७

प्रतिज्ञापालन में आत्मबलि।

जिस समय माना गूजरी का "काना बछड़ा" लेकर, तेजा घायल शरीर से, रणोन्मत्त होकर झूमता झामता, गिरता पड़ता और फिर सँभलता शत्रुओं का दमन करता हुआ सचमुच ही गूलर-फल के जीवों की तरह रणचंडी के वीर मीनों की बलि चढ़ाता, पनेर के पास पहुंचा तो पहली मुठ-भेड़ उसकी गूजरी माना से ही हुई। माना ने तेजा का अपने ही स्वार्थ के लिये विनाश करवाने पर भी अपना "एकल सांड़" पाकर उसे धन्यवाद दिया या नहीं सो गानेवाले नहीं कहते; वे यह भी नहीं

बतलाते कि "बचने का दरिद्रता" के सिद्धान्त से उसने तेजा से दो चार मीठे शब्दों से उसके मन का थोड़ा बहुत समाधान भी किया या नहीं। जब वह तेजा को मरवाने के लिये ही पैदा हुई थी, जब रण देवी को तेजा जैसे वीर की बलि चढ़ाना ही उसका इष्ट था और जब गानेवाले उसे तेजा का विनाश करनेवाली देवी बतलाते हैं तब वह तेजा को आशीर्वाद ही क्यों देने लगी। वह इस तरह के एक शब्द का उच्चारण किये बिना ही अपना "काना बछड़ा" लेकर वापस चल दी। वह इस तरह चल दी और तेजा ने भी अब उसे वहाँ ठहरने न दिया। आजकल के लोगों की तरह तेजा का उस समय भी ख़याल था कि मैली कुचैली औरत की परछांही पड़ने से उसके घाव बिगड़ जायंगे। जब वह तेजा का सचमुच ही काम तमाम कर चुकी थी तब उसे गरज़ ही क्या पड़ी थी जो अब वहाँ ठहर कर वह तेजा की मरहम पट्टी करने की झूंठ मूंठ मनुहार करती।

अस्तु! उसने वहाँ से चल कर तेजा के "अब तब" हो जाने की ख़बर उसकी ससुरालवालों को दी। जिनको तेजा पर न मालूम क्यों घृणा थी, जो उसके साथ साफ़ दुश्मनी दिखला चुके थे और

जिन्होंने तेजा की जान की तिनके की तरह बिलकुल परवाह न की, वे आते तो आते ही क्यों? वहाँ से आई केवल तेजा की गृहिणी और उसे अपने पति के पास जाने से रोकने के लिये उसकी कृत्या माता। तेजा की स्त्री पति की ऐसी दशा देख कर रोने लगी। उसने रो रो कर आकाश गुंजा डालने में बिलकुल कोताही नहीं की। उसने पति के चरणों में लोट कर उसे बहुतेरा समझाया—बहुत कुछ प्रार्थना की और यहाँ तक कहा कि गाँव में चलो, मैं तुम्हारी सेवा करूँगी और तुम्हें अवश्य आराम होगा।" परंतु तेजा ने उसकी बात पर कान नहीं दिया। उसने साफ़ कह दिया :—

"मैं अपना कर्त्तव्य पालन कर चुका। अब मुझे जी कर ही क्या करना है? मैं मर चुका और जब तक मैं नाग देवता के पास पहुंच कर अपनी प्रतिज्ञा पालन न कर लूं तब तक एक एक मिनट मेरे लिये भारी है। मैं यदि उसके निकट पहुंचने से पहले ही मर जाऊँ तो मेरी बात में बट्टा लग जाय। इस लिये मैं उधर जाता हूं और तू अपने बाप के यहाँ जाकर मौज कर।"

"सो मुझ से नहीं हो सकेगा। जहाँ तुम वहाँ मैं। तुम जिओगे तो मैं जिऊँगी और तुम......" इतना कहते कहते बादल का कंठ भर आया। वह न कह सकी कि 'तुम मरोगे तो मैं भी मर जाऊँगी।" हिन्दुओं में भले घर की बहू बेटियाँ सौभाग्यवती रमणियाँ अपनी ज़बान से ऐसा कभी नहीं कह सकती हैं। यदि भूल से भी उनके मुँह से ऐसी बात निकल जाय तो उन्हें मरणान्त कष्ट होता है। अच्छा, उसका गला भर जाने से उसने आगे नहीं कहा और नहीं कहने दिया उसकी राक्षसी माता ने। उसने फौरन ही बेटी का गला पकड़ लिया। वह बोलीः—

"इस निपूते के साथ तुझे मैं कभी मरने न दूँगी। यह कल मरता आज ही क्यों न मर जाय। अच्छी बात है मर जाय तो मैं तुझे दूसरा अच्छा ख़सम करा दूँगी। मेरी गोरी गोरी बेटी के लिए एक नहीं—अनेक तैयार हैं। इस मुए से हज़ार दर्जे अच्छे। जिनके यहाँ जाकर मेरी बेटी मौज उड़ावे।"

"अपनी दूसरी बेटी को ख़सम कराइयो अथवा तू ही बुढ़ापा भड़काने के लिए दूसरा ख़सम कर लीजियो। ख़सम का नाम लेते तेरी जीभ नहीं जल

जाती ? जो बेटी के लिए ऐसी बुराई सोचती है उसपर भगवान् करे बिजली पड़े। यह माता नहीं पूतना माता है। अपने बेटे बेटी को दूध के बदले ज़हर पिला देनेवाली माता है।"

"अरे मान जा बेटी। मरे के साथ मत मर। जब जाटों में एक मरने पर दूसरा और दूसरा मर जाने पर तीसरा कर लेने की चाल है और जब जाटनी पति से कष्ट पाकर अपने सात फेरे के ख़ाविन्द को छोड़ सकती है तब तू नाहक ही इस मुए के साथ क्यों मरती है। इसका हाथ पकड़ कर तूने सुख ही कौन सा पाया है जो तू मरने चली है।"

"अम्मा, दुःख सुख अपने नसीब का है। जो जैसा करता है वैसा ही पाता है। मैंने जैसा किया वैसा पा लिया। जब एक से ही सुख नहीं मिला तो दूसरे से मिलने की क्या आशा है ? फिर सुख भी मिले तो किस काम का ? फूँक दे ऐसे सुख को ! आग लगा दे ऐसे नये ख़ाविन्द को ! मुझे ऐसा नहीं चाहिये।"

'अरे मान जा बेटी। अपनी जननी का कहा मान जा ! मरे के साथ कोई भी नहीं मरता है।

जिनमें दूसरा ख़ाविन्द करने की चाल नहीं है वे भी नहीं मरती हैं।"

"यह अपना अपना मन है। अपनी अपनी ताक़त है। मैं मरूँगी और अपने बहादुर स्वामी के चरणों में लोट कर जल मरूँगी।"

"अरे बावली! जो रोटियाँ सेंकने में उंगली जल जाने से रो रो कर घर भर डालती है उससे दहकती हुई चिता में—ज्वाला छोड़ छोड़ कर जमीन आसमान एक कर डालनेवाली आग में-कैसे जला जायगा। मान जा। कहा मान। बेटी ज़िद्द मत कर। नाहक हठ करके अपनी फज़ीहत न करा।"

"बस जा! जा! अपना मुँह लेकर चल दे। ऐसी झूठी बातें करके मेरा सत मत डिगा। मैं मरूँगी और ज़रूर ही जल मरूँगी।"

यों कोरा उत्तर पाकर बोडल की माता वहाँ से चल दी किन्तु गई तेजा को कासती और बेटी को गालियाँ सुनाती हुई। सास के चले जाने के बाद तेजा ने भी अपनी स्त्री को बहुत कुछ समझाया बुझाया—बहुतेरा उसको बाप के यहाँ लौटा देने का हठ किया किन्तु प्राणनाथ के चरण पकड़ कर उनमें अपना शिर रख देने के सिवा, आँसुओं के धारा-

प्रवाह से पति-चरणों को सिंचन कर प्राणनाथ के अंतर्दाह को शमन करने और अपने कलेजे की दहकती हुई ज्वाला को शान्त करने के अतिरिक्त उसने एक शब्द भी मुँह से नहीं निकाला। बस इससे तेजा ने समझ लिया कि विवाह के बाद चौबीस वर्ष के अवसर में एक दिन के लिए भी दाम्पत्य सुख प्राप्त न होने पर भी बोडल का व्रत अटल है। अब हज़ार सिर पटकने पर यह माननेवाली नहीं। जब पति के साथ जाने की इसने दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली है तब सचमुच आग्रह करके इसका सत बिगाड़ना अच्छा नहीं। बस मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा में इसकी दृढ़ प्रतिज्ञा मिल गई। इस तरह पक्का मनसूबा बाँध कर दोनों वहाँ से चल दिये। पहले तेजा अकेला था किन्तु अब यदि दोनों के अलग प्राण और अलग तन माने जायँ तो एक और एक ग्यारह हो गये। किन्तु नहीं, हिन्दुओं के सिद्धान्त के अनुसार "एक प्राण दो तन"; और इस बात को दोनों ने थोड़ी देर के बाद सिद्ध भी कर दिखाया।

वे दोनों मार्ग में किस तरह गये सो कोई बतलानेवाला नहीं है किन्तु बन बन भटक कर दोनों ने उस साँप की बाँबी का पता लगाया। दोनों की

संयुक्त प्रार्थना से जब नागदेव बाहर आये तब हाथ जोड़ कर, धरती पर माथा टेक कर और आँचल पसार कर रोती हुई बोडल बोलीः—

"राजाओं के राजा, हे वासक (वासुकि) राजा, मुझ ग़रीब पर दया करके मेरे ख़ाविन्द को छोड़ दो। चौबीस वर्ष में एक दिन के लिए, एक पल के लिए भी मैंने सुख नहीं भोगा। एक के बदले दो दो हत्या क्यों लेते हो?"

"नहीं! इसमें मेरा दोष नहीं है। तेरा ख़ाविन्द खुद मुझसे प्रण कर गया है। यदि वह अब भी कह दे कि मैंने अपनी प्रतिज्ञा तोड़ी तो मैं छोड़ सकता हूँ। वह यहाँ अपना प्रण पूरा करने के लिए स्वयं आया है। मैं उसे बुलाने नहीं गया हूँ।" नाग देवता से ऐसा उत्तर पाते ही तेजा इस तरह उछल पड़ा जिस तरह पका फोड़ा छूने से बीमार उछल पड़ता है। वह अवश्य "अब तब" हो रहा था किन्तु अपने जोश को न सँभाल सका। उसने घावों की पीडा से अत्यन्त व्याकुल होने पर भी नशे में आकर ज़ोर के साथ उसने कहाः—

"नहीं! हरगिज़ नहीं! मैं अवश्य अपने वचनों का बाँधा हाज़िर हूँ। मैं अपने प्रण को लातों से

कुचलनेवाला नहीं हूँ। मुझसे यह कभी नहीं हो सकता कि मैं वचन चूक जाऊँ। दुनिया में वचन चूक जाने के बराबर पाप नहीं। महाराज मुझे वचन-चूक बाँदी का जाया नहीं कहलाना है। आप ख़ुशी से जहाँ जी में आवे डसे। मैं तैयार हूँ।"

"हाँ हाँ! तू तैयार है तो मैं भी तैयार हूँ। तू अपना प्रण निर्वाह करना चाहता है तो मुझे भी उज्र नहीं है परन्तु (तेजा को नख से शिख तक निहार कर) तुझे डसूँ भी तो कहाँ पर डसूँ। सिर से पैर तक कोई जगह भी तो ख़ाली मिले! सारा बदन तीरों की मार से छिन्न भिन्न हो रहा है। खून में तर है। मांस निकल पड़ा है। कहीं तिल धरने की भी तो जगह नहीं।"

"अच्छा इनके बदन में जगह नहीं है तो बाबा बासक (वासुकि) मुझे डस लो। मेरा सारा शरीर ख़ाली है और (पति की ओर इशारा करके) जैसे यह वैसी मैं। जिस दिन हमारा हथलेवा हुआ, जिस दिन से हमने भाँवरी फिरी उस दिन से एक प्राण दो तन हुए। और एक हो चाहे अलग अलग हो तुम्हें एक की हत्या करने से गरज़। बस इनको

छोड़कर मुझे काटो। इनके सामने मर जाने ही में मेरा भला है। यह जीते रह कर सुख पावें तो मैं सुख से मरूँ।"

"अजी, आप इन दोनों ही का क्यों डसते हो? मैं (घोड़ी बोली) तैयार हूँ। मुझे डसो श्रौर मेरे मालिक मालिकिन को सुख पाने के लिए छोड़ दो। मुझ जैसी इन्हें बहुत मिल जायँगी।"

"बस बस! समझ लिया! तू इन दोनों को वकील बनाकर अपने प्राण बचाने आया है। जो मरने से नहीं डरता है तो इन्हें क्यों लाया। बोल अब भी जान प्यारी है तो भिक्षा माँग।"

बस नाग देवता के मुँह से ऐसी बात निकलते ही फिर तेजा को जोश आया। फिर वह ललकार कर कहने लगाः—"नहीं नहीं! ऐसा हरगिज़ न होने दूँगा! मैं ज़रूर अपने वचनों को पालूँगा। अगर सारा शरीर ही आपके डसने लायक़ नहीं रहा है तो (जीभ निकाल कर) इसे डसिये महाराज! यह अछूत है।"

"अच्छा आपको एक के साथ तीन जान लेनी है तो भले ही डसें।" इस तरह बोडल के मुख से श्रौर "मालिक मर जाय तो मुझे भी जीकर क्या

करना है।" यों घोड़ी के कहने पर तेजा ने अपनी जीभ फैलाई और तब नागराज ने तेजा की जीभ का ख़ून पीकर अपना कलेजा ठंढा किया। इस तरह जब वह अच्छी तरह तृप्त हो चुका तब बोडल से बोलाः—

"तुम (घोड़ी की ओर संकेत करके) हम तीनों के लिए अपने मेरे और तेजा के लिए एक ही चिता तैयार करो। इस बहादुर सच्चे तेजा के साथ तू तो जलेहीगी, सात फेरे की औरत है परन्तु मैं भी जलूँगा। मैंने सारी लीला इसी लिए की है। एक ही चिता में तीनों के भस्म हो जाने बाद तेजा की पूजा तेजा के नाम से और देलवाल जी के नाम से होगी। हमारे मंदिर में जो मूर्त्ति पधराई जायगी उसमें तेजा, उसके गले में मैं और पास तू खड़ी हुई होगी। घोड़ी तेजा की अवश्य होनी चाहिए क्योंकि यह उसे बहुत प्यारी थी परन्तु यह भी अगर यहाँ मर मिटेगी तो तेजा के घर पर ख़बर देने कौन जायगा, और वहाँ पहुँचे बिना मेरा काम सिद्ध क्योंकर होगा?"

जब बोडल ने पूछा "आपका काम कौन सा?" तो नागराज ने उत्तर में कहा कि—"वही

हमारी पूजा होने का। इसी मतलव से मैंने इसे डसा है। मतलव मेरा यही है कि तेजा के नाम पर जो कोई आदमी या जानवर को "डसी" बाँध देगा उसपर साँप के काटे का असर बिलकुल न होगा। बस इस तरह नाम अमर करके लोगों का सैकड़ों पीढ़ियों तक उपकार करने के लिए—हज़ारों लाखों जीवों के प्राण बचाने के लिये यह कौतुक है।"

"अच्छा महाराज! आपकी इच्छा" कह कर बोडल चुप हो गई। तब उसने पति का मस्तक अपनी गोदी में से उतार कर एक साफ़ सुथरी सी जगह पर धरती में लिटाया। पति को लिटाने के बाद उसने हँसते हँसते प्रसन्न होकर जंगल की लकड़ियाँ इकट्ठी कीं। यों चिता तैयार की। कहीं से तलाश करके चिता में आग दी और जब नीचे से वह अच्छी तरह जल उठी तब पति को उसपर लिटा कर लपक कर उसपर चढ़ बैठी। पति का मस्तक अपनी गोदी में रख कर बड़ी दृढ़ता के साथ बैठ गई। उसकी आँखों में आँसू की एक बूँद नहीं। मुख पर उदासी की बिलकुल झलक नहीं। बस मुख कमल पर मुसकुराहट, आँखों में मीठी मीठी हँसी और जबान पर भगवान के नाम के साथ पति

के चरणों में टकटकी। जलते जलते उसने माता पिता को शाप अवश्य दिया कि। "तू सूअरी होजा और तू खोभ्फडा।" क्रोध के मारे उसकी ज़बान से इतना निकला सो निकला। उसने भाई को फलने फूलने का, अन्न धन बढ़ने का आशीर्वाद भी दिया। किन्तु आनन्द के साथ अपने कर्तव्य पालन से प्रसन्न होते हुए–मानो आज अखंड ऐश्वर्य पा लिया–इस प्रकार के हर्ष से उसने सच्ची चिता के साथ पातिव्रत की अनंत ज्वाला में अपना सुख, अपना सौभाग्य, अपना शरीर और अपना प्राण तक होम दिया। ज़रा सी चिनगारी छू जाने पर जो सत्ताईस बार "सी सी" करती थी, जो मरने की गाली सुन कर मारने को दौड़ती थी उसने आज पैर जलने पर, हाथ जलने पर, शरीर जलने पर और मस्तक जल जाने पर एक बार "सी"तक नहीं की। लोग कहते हैं कि स्वामी की मुहब्बत स्त्री को विह्वल कर चिता में भस्म कर डालती है परंतु उसे स्वप्न में भी पति से प्यार करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। विवाह के दिन यदि संयोग से दंपती की चार नज़रें हो गेई हों तो याद नहीं। वे चार नज़रें दुधमुँहे बालक

बालिका की थीं, किन्तु आज के सिवा दोनों ने एक दूसरे को कभी नज़र भर देखा तक नहीं। तब प्रेम का वास्ता कैसा ? किन्तु जैसे तेजा ने अपने कर्त्तव्य की रक्षा के लिए, अपना नाम अमर कर जाने की इच्छा से, अपने प्यारे प्राणों की प्रतिज्ञा देवी को बलि चढ़ा दी उसी तरह बोदल ने आत्म-विसर्जन कर दिया। यों दोनों शरीर छोड़ देने पर भी मरे नहीं, जीते हैं। उनका यश उसी समय चिता की ज्वाला के साथ गगन-मंडल को भेदता हुआ स्वर्ग की अप्सराओं से गाया जाने लगा। बस इसी का यह परिणाम है कि अनेक वर्ष बीत जाने पर भी देवताओं की तरह उनकी पूजा होती है।

अध्याय ८

अंतिम दृश्य।

यों दम्पती की चिता में नागराज को भस्म कर देनेवाली ज्वालाएं "सूँ सूँ" शब्द के साथ धुवों के हरकारों को आगे भेज कर जब आकाश से सूर्य मंडल को भेदती हुई स्वर्ग के देवताओं द्वारा विष्णु भगवान के चरण कमलों में तेजा के, और बोडल के कर्तव्य पालन का तथा नागराज

की कामना का पैगाम पहुँचा तब घायल घोड़ी ने अपने मालिक के चिर वियोग का मरणान्त दुःख आजीवन अपने हृदय में धारण कर माता लछमा (लक्ष्मी) के पास यह हृदय-विदारक शोक-संवाद पहुँचाने के लिये रास्ता लिया। घोड़ी बेशक घायल हो चुकी थी। उसके प्राण भी अपना सदा का अड्डा छोड़ कर कंठ में आ चुके थे। कदम कदम पर "यह गिरी, वह पडी" की हालत में आ पहुँची थी। जब ऐसा बहादुर मालिक मर चुका था तब उसे जी कर ही क्या करना था? अब मरी तो मरी और घंटे भर बाद मरी तो मरी। परंतु यदि पैगाम पहुँचाने का कर्तव्य पालन करने से पहले ही मर जाय तो घोड़ी की जाति पर बट्टा लग जाय। उसका खेत ही कलंक का टीका लगने से बदनाम हो जाय। आज से फिर कभी कोई "सूर्यपुत्र" का भरोसा न करे।

शीघ्र गति में मोटर रेलवे और आकाशयान ने यदि घोड़े का आसन छीन लिया तो छीन लिया, जल्दी पहुँचने के काम में यदि लोग घोड़े घोड़ी को धिक्कार कर, उनका निरादर कर, विज्ञान की सवा-रियों पर चढ़ने में ही अपना सैाभाग्य समझें तो उन्हें अधिकार है। परमेश्वर के न्यायालय के सिवा

संसार में ऐसी अदालत कहीं नहीं है जहाँ अश्व जाति फरियाद करे। किन्तु आज कल की मोटर, रेल और आकाशयान घोड़े के पैरों की भी बराबरी नहीं कर सकते। दोनों में दिन रात का सा, धरती आकाश का सा और कौड़ी मोहर का सा अंतर है। वे निर्जीव हैं और यह सजीव। वे हृदयशून्य हैं और इसका अंतःकरण स्वामिभक्ति और अपने कर्तव्य पालन से "लबालब" भरा हुआ है। मोटर, रेल और आकाशयान आदि सवारियाँ जिन विद्वानों की बनाई हुई हैं अथवा जो उनके स्वामी हैं उन्हें भी उनकी चूक का दंड देने से कभी नहीं चूक सकते। उनके यहाँ ज़रा सी चूक के लिये प्राण-दंड है। उनका भयंकर कुंभकर्णी कोप सैकड़ों हज़ारों को बात की बात में विनष्ट कर डालता है। किन्तु घोड़ा! घोड़ा संसार में अपनी बराबरी नहीं रखता। उसके समान स्वामिभक्त, संसार में उससे अठगुना मूल्य पाकर अठगुना ख़र्च करानेवाला हाथी नहीं। स्वामि-भक्ति का सार्टिफिकेट पानेवाला कुत्ता तक नहीं। कुत्ता चाहे कितना ही मख़मल के गद्दे पर क्यों न लिटाया जाय परंतु गोली की चटाचट और तल-वार की खचाखच होते ही दुम दबा कर अलग।

किन्तु अच्छा घोड़ा मरने मारने के समय मैदान के बीच। वह जैसे रणभूमि में मालिक के साथ मर मिटने के लिये तैयार है वैसे ही सवार के प्राण बचा कर निकाल ले जाने में भी चतुर। उस की नस नस में वीरता, उसके अंतःकरण में स्वामिभक्ति और उसके हृदय में मनुष्य के समान प्रेम। मनुष्य के हृदय से भी बढ़कर। मनुष्य का हृदय स्वार्थपूरित, और उसके हृदय में प्रेम के सिवा स्वार्थ का लेश भी नहीं।

बस इन गुणों से ओत प्रोत भरी हुई लीला अपने मालिक के भस्म हो जाने की ख़बर लेकर रूपनगर में अपनी बूढ़ी मालिकिन के दर्वाज़े पर जा हिनहिनाई। "हैं बेटा आगया? घोडी तो अपनी ही है, चलो अच्छा हुआ। बहू को भी ले आया होगा। अच्छी बात है। फलो फूलो।" कहती हुई बेटे-बहू के मुखदर्शन की लालसा से, आनन्दसागर में गोते खाती सीढियाँ उतर कर मकान से बाहर हुई। उसने घोड़ी देखी किन्तु सवार नहीं। उसका सारा शरीर लहू लुहान। गोली की मार से कई जगह शरीर छिद रहा है। तीर जो बदन में घुस रहे हैं उन्हें काई निकालनेवाला नहीं। "बस, हाय गजब हो गया! हाय रे बेटा! मैं तो तुझे पहले ही

मना करती थी" यों कहती हुई मालिकिन मूर्छित होकर एक तरफ़ और अपने कर्तव्य से निवृत्त होकर धड़ाम से घोड़ी दूसरी तरफ गिर गई। धड़ाम धड़ाम की दो बार आवाज़ें सुनकर घर के, बाहर के, मुहल्ले के सब दौड़े हुए आये। वास्तव में पैगाम देनेवाला कोई नहीं था परंतु अटकल से उन्होंने जान लिया कि तेजा मारा गया। जब लछमा सचेत हुई तब ख़ूब ही रोई झोंकी और घरवाले भी रोये; गाँववालों ने, अड़ोसी पड़ोसियों ने उनके साथ सहानुभूति दिखलाई। और विशेष लिखकर पाठकों का हृदय दुखाने से कुछ लाभ नहीं है। ऐसे समय में जो कुछ होता आया है सब ही हुआ।

गानेवाले कहते हैं कि—"माता से घोड़ी ने सारा क़िस्सा कह सुनाया था।" इस पर कोई भरोसा करे या न करे उसे अधिकार है। यदि उसका आदमी की तरह बोलना असंभव है, यदि इसी तरह साँप का बात चीत करना असंभव है तो तेजा को मरते मरते जिला देनेवाले—साँप के काटे को प्राणदान करनेवाले और यों असंभव को संभव कर दिखानेवाले चमत्कार के पासंग में हैं। राजपूताने के जो लाखों आदमी इन चमत्कारों को सत्य

मानते आए हैं उनके लिये तो सत्य है ही किन्तु जिनके हृदय की ऊसर भूमि में हजार बीज पड़ने पर भी विश्वास का अंकुर नहीं जम सकता वे मान लें कि घोडी ने दोनें जगह इशारों से समझा दिया था। जो घोड़े घोड़ी के स्वभाव का अध्ययन करनेवाले हैं अथवा जिन्होंने प्राणिविद्या का अनुशीलन किया है वे अवश्य मानेंगे कि पशु पक्षियों की, कीट पतंगादिकों की भी कोई भाषा है श्रोर जो अभ्यास करता है उसके लिये असाध्य नहीं है; कष्टसाध्य भले ही हो।

अच्छा जो जैसे माने उसे वैसे ही मानने दीजिये। घोड़ी के बताये हुए ठिकाने पर तेजा की तलाश करने के लिये घायल घोड़ी के खुरों तथा उसके रक्त-बिन्दुश्रों के चिह्न के सहारे सहारे तेजा की माता, उसका पिता श्रोर सगे साथी बैल गाड़ी पर सवार होकर चल दिये। घोड़ी के प्राण पखेरू वहीं उड़ गये।

अपने मालिक मालकिन के आत्मविसर्जन की सूचना देने के अनंतर जब घोड़ी ने अपने प्यारे प्राणों का त्याग कर दिया तब उसकी तो कथा ही समाप्त हो गई। ऐसी स्वामिभक्त घोड़ी का यदि किसी

ने स्मारक बनाया तो क्या और न बनाया तो उसे क्या! जब घर में एकदम से दो दो स्वजनों का चिर-वियोग हो गया तब उस विचारी की सुध लेनेवाला भी कौन? अस्तु तेजा के मातापिता, बंधुबांधव, नौकर चाकर जंगल जंगल ढूंढ़ते हुए उसी जगह जा पहुंचे जहाँ तेजा की, उसकी अर्द्धांगिनी बोडल की और साथही उस सर्प की राख का ढेर चिता-भस्म में मिल कर उनका नाम शेष रह गया था। थोड़ी सी हड्डियाँ और थोड़ी सी आग के सिवा वहाँ कोई नाम निशान नहीं। यदि तेजा और उसकी स्त्री का भस्मावशेष हो गया तो हो गया किन्तु उसके शस्त्रों के सिवाय ऐसी कोई चीज़ नहीं बची जिसे छाती से लगाकर उसके माता पिता अपना कलेजा ठंढा कर सकें। प्रियजनों की प्यारी वस्तु का उनके चिरवियोग के अनंतर दर्शन प्रियदर्शन नहीं है। उसे देखने से सुख के बदले दुःख होता है। बस यही दशा उसके मातापिता की हुई। "हाय तेजा! अरे प्यारे पूत! ओ बुढ़ापे की लकड़ी! हाय हमें मंझधार में डाल कर कहाँ चल दिया! हाय रे! हे भगवान् हमें भी मौत दे दो।" कहते कहते दोनों बेहोश! वे दोनों इस तरह अचेत भी हुए और समय

पाकर उन्हें होश भी आया। उन्होंने उस जगह दम्पती की अंत्येष्टि क्रिया की अथवा नहीं। दोनों की अस्थियाँ गंगा जी भेजी गई अथवा नहीं सो कोई नहीं कह सकता किन्तु जब तेजा इतना पराक्रम दिखला कर, केवल सत्य के लिये अपनी बलि चढ़ा कर स्वर्ग को सिधारा था, जब उसकी अभिलाषा और नागराज की आज्ञा थी तब उस जगह चबूतरा बनवा कर उसपर उनकी मूर्त्ति स्थापित की गई और इस तरह इस दुःखान्त कथा की यहीं समाप्ति हो गई।

संस्कृत-साहित्य में 'दुःखान्त' नाटक दूषित समझा जाता है और मैं भी उसे पसंद नहीं करता हूं। दुःखान्त से दर्शकों अथवा पाठकों के अन्तः-करण पर प्रभाव पड़ता है सही परंतु जिसके असर से हृदय कांपता रहै वह प्रभाव नहीं। भय की छाया है। और भय, शोक, और वेदना मनुष्य को कीटभृंग की नाईं उसी में गिरा देती है इसलिये दुःख के अनन्तर सुख होना चाहिये। मैंने अभी तक जो कुछ लिखा लिखाया है सब केवल इसी उद्देश्य से। परंतु यह नियम कल्पना के मनोराज्य में आसन पा सकता है। सत्य घटना में नहीं। और तेजा की

जो कहानी है वह सत्य घटनामूलक है। बस इस लिये मुझे 'दुःखान्त' लिखने की लाचारी ग्रहण करनी पड़ी। अस्तु जो कुछ होना था सो हो गया। जब मुझे दुःखान्त लिखना ही इष्ट नहीं है तब इस पुस्तक के अन्तिम दृश्य को अधिक मर्मभेदी, विशेष हृदयद्रावक, शब्दों में दिखला कर पाठकों को चर्म-चक्षुओं से वा हृदय की आँखों से रुलाना भी अच्छा नहीं।

तेजा का परलोकवास भाद्र शुक्ला १० को हुआ। इसमें किसी तरह का संदेह नहीं। राजपूताना भर में इसी दिन तेजा दशमी के नाम से उत्सव होता है किन्तु उसके जन्म का दिन कौन और संवत् कौन था ? इस बात का पता जब राजपूताने के प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता मुंशी देवीप्रसाद जी को ही नहीं लगा तब मुझ अकिंचन को लगने की आशा क्या ? हाँ ! गानेवालों के कथन से विदित हुआ है कि संवत् १ की यह घटना है। परंतु यह एक किस शताब्दी का एक है सो किसी को मालूम नहीं। इसलिये इस "एक" का मालूम होना और न होना बराबर है। गत पृष्ठों के पढ़ने से इतना अनुमान होता कि जिस समय की यह

घटना बतलाई जाती है उस समय राजपूताने बल्कि भारतवर्ष में भयानक अराजकता थी। किसी की जान और माल की खैर नहीं थी। और यदि कोई कारण हो सकता है तो यही जिससे तेजा को उसकी माता ने पीहर में बहू जवान हो जाने पर भी उसका मुकाबला कराने के लिये नहीं जाने दिया। मुंशी देवीप्रसाद जी की खोज से जब पर्वतसर (मारवाड़) में तेजा जी की मूर्त्ति के निकट संवत् १७९१ मिती भाद्रपद कृष्ण ६ शुक्रवार को महाराज अभयसिंह जी के राज्य में प्रधान भडारी विजय-राज का मूर्त्ति पधराकर प्रतिष्ठा करने का उल्लेख है तब यह तो निश्चय हो ही गया कि यह घटना संवत् १७९१ अर्थात् १८० वर्ष से पूर्व की है। कितने वर्ष पूर्व की ? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिये कुछ अटकल से काम लेना पड़ेगा। जो महाशय अपनी अटकल पर ज़ोर लगाकर परिणाम निकाला चाहें वे निकाल सकते हैं। मेरे अनुमान से यह घटना उस समय की होनी चाहिये जब राजपूत-नरेशों की शक्ति नामशेष रह गई थी। वह समय औरंग-जेब के शासन के लगभग है। अस्तु।

पुस्तक को समाप्त करने से पूर्व तेजा के जन्म-स्थान का, उसकी ससुराल का और उस स्थल का जहाँ उसने आत्मविसर्जन किया पता लगाने की आवश्यकता है । मुंशी देवीप्रसाद जी न मालूम किस आधार पर बतलाते हैं कि तेजा खड़नाल परगने नागोर राज्य जोधपुर का रहनेवाला था। किन्तु गानेवाले उसकी जन्मभूमि रूपनगर राज्य किशनगढ़ में बतलाते हैं। मैं गानेवालों के कथन से मुंशी जी की खोज को विशेष प्रामाणिक मानता हूँ किन्तु एक ही बात से मुझे "खोज" पर सन्देह होता है। बात यह है कि तेजा के लिये जब स्मारक बनना मुंशी जी पर्वतसर में स्वीकार करते हैं तब संभव नहीं है कि खडनाल छोड़ कर उसके माता पिता ने उसका चबूतरा इतनी दूर पर पर्वतसर में बनाया हो। गानेवाले तेजा का घर रूपनगर में बतलाते हैं और यहाँ से पर्वतसर दो तीन कोस से अधिक नहीं। बस इसलिये अधिक संभव यही है कि उसकी जन्मभूमि रूपनगर में थी।

खैर कुछ भी हो पनेर के विषय में भी इसी तरह का मतभेद है। मुंशी जी की खोज के अनुसार गाँव पनेर किशनगढ़ राज्य में बतलाया जाता

है किन्तु न तो नक़शे के देखने से किशनगढ़ राज्य में किसी पनेर नामधारी गांव का पता लगा और न गानेवालों की बात पर ध्यान देने से यह बात अटकल के तराज़ू पर तुल सकती है। यह मैं पहले ही कह चुका हूँ कि गानेवालों के मत से तेजा को रूपनगर से गोकर्णेश्वर के निकट बनास पार करके पनेर जाना पड़ा था। राजमहल राज्य जयपुर में छावनी देवली के निकट गोकर्णेश्वर महादेव का सुप्रसिद्ध मंदिर है। इस बात पर विश्वास करने से पनेर का होना डुगारी के निकट कहीं आस पास पाया जाता है क्योंकि तेजाजी के मुख्य धामों में से एक डुगारी भी है। यह डुगारी बूँदी राज्य में है। मंदिर में शिलालेख नहीं इसलिए इस विषय में अधिक नहीं कहा जा सकता। हाँ, एक पनेर मेवाड़ राज्य में भी है। उसका नाम पंदेर है। यह बनास नदी के किनारे जहाजपुर से पश्चिम की ओर दो तीन कोस पर होगा। परन्तु इस जगह पहुँचने के लिए राजमहल के निकट बनास उतरने की आवश्यकता नहीं।

मुंशी जी के अनुमान से तेजा को साँप डसने की घटना कहीं पनेर के आस पास की ही पाई जाती है और हाड़ोती के गानेवालों ने तेजा की पूजा

के पर्वतसर, उकलाना और डुगारी—ये तीन मुख्य पीठ बतलाने के सिवा किसी ख़ास जगह का पता नहीं दिया है। संभव है कि यह जगह उकलाना हो। परन्तु उकलाना किस राज्य में है सो अभी तक मालूम नहीं हो सका। रूपनगर से पनेर जाते समय गानेवालों ने तेजा के लिए जो मार्ग बतलाया है उसपर गौर करने से निश्चय होता है कि जाती बार जिस जगह उसे साँप के दर्शन हुए थे वह बनास नदी और रूपनगर के बीच में है। साँप ने तेजा को अपने रहने का जो स्थान बतलाया उस जगह ऊँचे और नीचे चौरे बतलाये गये हैं। चौरे रणभूमि में काम आनेवाले वीर पुरुषों के लिए अथवा राजा तथा राजपुरुषों के लिए बनवाये जाते हैं। पता लगानेवाले उकलाने की खोज करते समय यदि जाँचना चाहें तो इसे भी देख सकते हैं।

मुंशी देवीप्रसादजी की खोज के अनुसार तेजा के आत्मविसर्जन का स्थान पनेर है और इसी लिए वहाँ तेजा का पूजन भाद्रपद शु० १० को होता था किन्तु किशनगढ़ राज्य के हासिल (?) से कष्ट पाकर मारवाड़ के ''ट और गूजर पनेर से तेजा की मूर्त्ति उखाड़ कर पर्व ले गये। वहाँ अब बड़ा भारी मेला होता

है और गाय बैलों की बिक्री होती है। संभव है कि यह बात सत्य हो परन्तु जब पर्वतसर और रूपनगर का फासला केवल २ या ३ कोस है तब रूपनगर से उखाड़ ले जाने और ससुराल पनेर की होने से उसके नाम की अटकल लगाई गई हो तो कुछ आश्चर्य्य नहीं। अब यों तो तेजा दशमी का मेला बड़े बड़े गाँवों में सब जगह होता है किन्तु पर्वतसर, केकड़ी और डुगारी--ये तीन स्थान मुख्य हैं। यहाँ मेले के व्याज से ख़ूब व्यापार भी होता है।

तेजा का चरित्र समाप्त करने से पूर्व अब एक ही बात शेष रह गई है। उसके चरित्र में चमत्कार भी है और उत्कृष्ट गुणों का समुदाय भी। जो चमत्कार के उपासक हैं वे राजपूताना के लाखों आदमी अपने अटल विश्वास से उसकी भक्तिपूर्वक पूजा करके सर्पदंश के भय से मुक्त होते हैं। सर्पदंश के प्राणान्तकारी विष के लिए यदि राजपूताने में कोई औषध है तो तेजाजी की डसी और मंत्र है तो उसका नाम। खैर जो इस प्रकार के अलौकिक चमत्कार के उपासक हैं वे प्रसन्नता से उसकी पूजा करके अपने, अपने स्वजनों के और सर्वसाधारण के प्राणों की रक्षा करें। आज कल के अविश्वास और

अश्रद्धा के ज़माने में जब हैदराबाद के निज़ाम स्वर्ग-वासी महबूबअली ख़ाँ साहब के नाम लेने से सर्प-विष दूर हो सकता था तब तेजस्वी तेजा के नाम से क्यों न हो ! किन्तु मैं चमत्कार का उपासक नहीं। गुणों का पूजक हूँ। तेजा ने अपने उत्कृष्ट चरित्र से साबित कर दिया है कि कैसे एक क्षुद्राति-क्षुद्र मनुष्य भी अपनी आत्म-शक्ति से, अपना आत्मविसर्जन करके अपने सर्वस्व और प्राणों की बलि चढ़ाकर मनुष्य से देवता बन सकता है। "नर से नारायण" बनने के विशाल उद्योग का यह एक छोटा सा नमूना है।

तेजा सचमुच ही प्रतिज्ञापालन, सत्यनिष्ठा और परोपकार का आदर्श था। एक खेतिहर अपढ़ जाट होने पर भी क्षत्रियत्व उसके अन्तःकरण में ठसाठस भरा हुआ था। यदि उसके मन में परा-क्रम की परिसीमा न होती, यदि उसका अंतःकरण परोपकार व्रत का व्रती न होता तो वह कभी डेढ़ सौ आदमियों से अकेला न भिड़ पड़ता! यदि उसे अपनी जान प्यारी होती तो "काने बछड़े" को छुड़ा लाने के लिए दुबारा क्यों जाता? यदि उसका शरीर और उसका अंतःकरण सत्यनिष्ठ न होता तो

अपनी प्रतिज्ञा पालने के लिए साँप के पास जाकर अपने प्राणों की पूर्णाहुति ही क्यों करता? उसका प्राणान्त करने का प्रधान कारण गूजरी माता थी। उसी ने उसे मरवाया परन्तु उसने हँसकर उसका स्वागत करने के सिवा उसकी इच्छा पूर्ण करने के अतिरिक्त एक शब्द भी उसके लिए बुरा नहीं कहा। ससुरालवालों के निरादर को वह ज़हर के घूँट की तरह पी गया। जैसा असाधारण चरित्र तेजा का था वैसी ही उसकी अर्द्धांगिनी निकली। केवल हथ-लेवे के सिवा पति का कभी संपर्क न होने पर भी और जाटों में धरेजे की चाल होने पर भी बोडल उसकी सहगामिनी हुई। पातिव्रत का यह एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

यदि देशी विद्वान् परंपरा से बाप दादे की धरो-हर में मिलनेवाले इतिहास की खोज करके उसे ज़बानी से लेखबद्ध करना चाहें तो तेजा ऐसे क्या उससे भी बढ़कर सत्पुरुषों, महात्माओं और महावीरों के हज़ारों ही प्रातःस्मरणीय चरित्र मिल सकते हैं। भारतवर्ष के आधुनिक इतिहास पर एक नई रोशनी पड़ सकती है। खोजनेवाला चाहिए। इस देश का ऐसा कोई गाँव न होगा अथवा ऐसा कोई

कुटुँब न होगा जिसका कुछ इतिहास न हो, जिसके इतिहास में किसी न किसी तरह की विशेषता न हो। वह दिन सचमुच ही देश के लिए शुभ दिवस होगा जब इस बात की खोज होने लगेगी। परमेश्वर विद्वानों को ऐसी ही सुबुद्धि प्रदान करे।

—:o:—